योगविद्या

वर्ष 7 अंक 11
नवम्बर 2018
सदस्यता डाकखर्च–रु100

बिहार योग विद्यालय, मुंगेर, बिहार, भारत

हरि: ॐ

योग विद्या का सम्पादन, मुद्रण और प्रकाशन स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के संन्यासी शिष्यों द्वारा स्वास्थ्य लाभ, आनन्द और प्रकाश प्राप्ति के इच्छुक व्यक्तियों के लिए किया जाता है। इसमें बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान के क्रियाकलापों की जानकारियाँ प्रकाशित की जाती हैं।

सम्पादक – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

योग विद्या मासिक पत्रिका है। देर से सदस्यता ग्रहण करने पर भी उस वर्ष के जनवरी से दिसम्बर तक के सभी अंक भेजे जाते हैं।

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर, 811201, बिहार, द्वारा प्रकाशित।

थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, फरीदाबाद, 121007, हरियाणा में मुद्रित।

© Bihar School of Yoga 2018

पत्रिका की सदस्यता एक वर्ष के लिए पंजीकृत की जाती है। कृपया अपने आवेदन अथवा अन्य पत्राचार निम्नलिखित पते पर करें –

बिहार योग विद्यालय
गंगा दर्शन,
फोर्ट, मुंगेर, 811201
बिहार

✉ अन्य किसी जानकारी हेतु स्वयं का पता लिखा और डाक टिकट लगा हुआ लिफाफा भेजें, जिसके बिना उत्तर नहीं दिया जायेगा।

कुल पृष्ठ संख्या : 58 *(कवर पृष्ठों सहित)*

कवर : क्रिया योग यात्रा 2018

अन्दर के रंगीन फोटो : 1-4: अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस 2018

आध्यात्मिक मार्गदर्शन

मानसिक एकाग्रता

मन को एक बिन्दु पर केन्द्रित करने को एकाग्रता कहते हैं। यदि मन किसी एक बिन्दु पर इस प्रकार टिक जाए कि न तो उसमें अस्थिरता रहे, न चंचलता, तो उसे एकाग्रता कहा जायेगा। योग-दर्शन में एकाग्रता को ही धारणा कहा जाता है। एकाग्रता के बाद ध्यान की स्थिति आती है। तैलधारा के समान एक ही विचार को निरन्तर बनाये रखना योग की भाषा में ध्यान कहलाता है। ज्ञानी इसे निदिध्यासन कहते हैं। भक्तों की दृष्टि में यह भजन है।

एकाग्रता की अवस्था में मन इधर-उधर भागता नहीं है। यह अवस्था मन की चंचलता को समाप्त करने पर आती है। इसकी अभिव्यक्ति मानसिक स्थिरता के रूप में होती है। प्रसन्न व्यक्ति का मन एकाग्र होता है। जब एकाग्रता होती है तब मन सहज, स्थिर, एकरस और हर्षित हो जाता है।

– श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर-811201, बिहार के लिए स्वामी ज्ञानभिक्षु सरस्वती द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित
मुद्रक – थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, 18/35 माइलस्टोन, दिल्ली मथुरा रोड, फरीदाबाद-121007, हरियाणा
स्वामित्व – बिहार योग विद्यालय **सम्पादक** – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

योगविद्या

वर्ष 7 अंक 11 •नवम्बर 2018
(प्रकाशन का 56 वाँ वर्ष)

विषय सूची

4 योग का सार
6 नूतन संस्कृति
11 तंत्र शास्त्र में चेतना की मीमांसा
20 स्वाध्याय का महत्त्व
23 सत्यम् वाणी
41 चतुर्थ अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस
45 योग दिवस 2018 की झाँकियाँ
49 संस्कार और जीवनशैली
54 योग यात्रा के सहयात्री

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिक:। कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन॥

योग का सार

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

योग आत्म-संस्कृति की पूर्ण व्यावहारिक प्रणाली है। यह वास्तविक विज्ञान है। शरीर, मन तथा आत्मा का सन्तुलित विकास ही इसका लक्ष्य है। विषय-जगत् से इन्द्रियों को हटाना तथा मन को अन्दर की ओर एकाग्र करना ही योग है। योग आत्मा में अमर जीवन है। मन तथा इसकी वृत्तियों का निरोध ही योग है। योग-मार्ग आन्तरिक पथ है, जिसका प्रवेश-द्वार आपका हृदय ही है।

मन, इन्द्रिय तथा शरीर का संयम योग है। शरीर में स्थित सूक्ष्म शक्तियों का समन्वय तथा उन पर नियन्त्रण करने में योग सहायता देता है। योग पूर्णता, शान्ति तथा नित्यसुख प्रदान करता है। योग आपके व्यापार तथा आपके दैनिक जीवन में भी आपकी सहायता कर सकता है। योगाभ्यास द्वारा आप सदा मन की शान्ति को बनाये रख सकते हैं। आपको निश्चिन्त नींद आयेगी। आपको अधिक शक्ति, वीर्य, आयु तथा उन्नत स्वास्थ्य की प्राप्ति होगी। योग पाशवी प्रकृति को दिव्य प्रकृति में रूपान्तरित करता है तथा आपको दिव्यता के शिखर पर बैठा देता है।

योगाभ्यास द्वारा आप अपने आवेगों तथा उत्तेजनाओं पर नियन्त्रण रख सकते हैं। इससे प्रलोभनों का प्रतिरोध करने तथा मन के रजस् के विनाश के लिए शक्ति प्राप्त होती है। इसके द्वारा आप सदा मन को सन्तुलित बनाये रख सकेंगे तथा थकावट से सदा बचे रहेंगे। यह आपको गाम्भीर्य, शान्ति तथा अनोखी धारणा-शक्ति प्रदान करेगा। इससे आप ईश्वर का साक्षात्कार करने में समर्थ बनेंगे। आप जीवन के लक्ष्य को प्राप्त कर लेंगे।

यदि आप योग में सफलता प्राप्त करना चाहते हैं, तो आपको सभी प्रकार के सांसारिक सुखों का परित्याग कर तप तथा ब्रह्मचर्य का अभ्यास करना होगा। आपको युक्ति और कुशलता के साथ मन को वशीभूत करना होगा। इसको नियन्त्रित करने के लिए आपको बौद्धिक तथा विवेकपूर्ण साधनों का प्रयोग करना होगा। यदि आप बल का प्रयोग करेंगे, तो मन और भी उपद्रवी तथा विप्लवकारी बन जायेगा। इसको बल के द्वारा हम वशीभूत नहीं कर सकते। यह अधिकाधिक कूदना तथा उछलना आरम्भ कर देगा और दूर भाग जायेगा। जो लोग बलपूर्वक मन को अपने वश में करने का प्रयास करते हैं, वे उनके समान हैं जो पतले रेशमी धागे से मदमत्त हाथी को बाँधने का प्रयास कर रहे हों।

योगाभ्यास के लिए गुरु अनिवार्य है। योग-मार्ग के साधक को नम्र, सरल, सुशील, शिष्ट, सहनशील, दयालु तथा कारुणिक होना चाहिए। यदि आपको सिद्धियों की प्राप्ति के लिए कौतूहल है तो आप योग में सफलता प्राप्त नहीं कर

सकते। छः घण्टों तक पालथी मारकर किसी एक आसन में बैठे रहना, हृदय अथवा नाड़ी की गति को रोके रखना, जमीन के भीतर एक सप्ताह अथवा एक महीने तक गड़े रहना—यह योग नहीं है।

अशिष्टता, अभिमान, विलासिता, नाम, यश, अहंकार, स्वेच्छाचारिता, बड़प्पन का भाव, विषय-कामनाएँ, कुसंगति, आलस्य, अति-आहार, अति-श्रम, अति-संसर्ग तथा अति-भाषण—ये योग-पथ के कुछ विघ्न हैं। अपने दोषों को बिना किसी संकोच के मान लीजिए। इन दुर्गुणों से मुक्त हो जाने पर आपको स्वतः ही समाधि प्राप्त हो जायेगी।

यम तथा निमय का अभ्यास कीजिए। पद्मासन या सिद्धासन में आराम के साथ बैठ जाइए। प्राणायाम कीजिए। अपनी इन्द्रियों को समेट लीजिए। वृत्तियों का दमन कीजिए। धारणा कीजिए। ध्यान कीजिए तथा असम्प्रज्ञात अथवा निर्विकल्प-समाधि को प्राप्त कर लीजिए। योगाभ्यास द्वारा आप योगी के रूप में विभासित बनें! आप शाश्वत आनन्द की प्राप्ति करें!

नूतन संस्कृति

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

मैं करीब 2-3 महीनों से विश्व के सब देशों का भ्रमण कर रहा हूँ, घूमने के विचार से नहीं, बल्कि योग प्रचार के ख्याल से। मुझे ऐसा मालूम पड़ा कि आज दुनिया में हर धर्म के लोग, यहाँ तक कि नास्तिक लोग भी योग को स्वीकार करने लगे हैं। विज्ञान, तकनीकी, साम्यवाद या समाजवाद जैसे जितने भी प्रतिपंथी सिद्धान्त हैं जो आत्मा और ईश्वर को नहीं मानते हैं, वे आज योग को मानने लगे हें। ऐसे धर्म जो पुनर्जन्म को नहीं मानते, मूर्ति पूजा को भी नहीं मानते, योग को स्वीकृति देने लगे हैं। पोप ने भी रोम में अपनी बहुत बड़ी वैटिकन काउन्सिल में इस बात को स्वीकार किया है कि ईसाई धर्म को अब योग को स्वीकार कर लेना होगा। रूस में भी परा-मनोविज्ञान की शोधों के सिलसिले में बड़े-बड़े वैज्ञानिकों ने, जो ईश्वर या इन्द्रियों के परे किसी वस्तु की सत्ता को नहीं मानते हैं, योग और ध्यान के महत्त्व को अपने अन्वेषणों के आधार पर माना है। इन सब बातों का एक यह भी प्रमाण है कि पिछले वर्ष मेरे पास 21 राष्ट्रों के प्रतिनिधियों ने 9 माह तक योग का टीचर्स ट्रेनिंग कोर्स किया था।

मैं जब योग प्रचार पर निकला था तो मैंने सोचा था कि मुझे बहुत मेहनत करनी पड़ेगी, लोगों को समझाना होगा, वाद-विवाद होंगे, अपनी बातों को सिद्ध करने के लिये शास्त्रार्थ होंगे, मगर मेरी सारी धारणा गलत निकली। हिन्दुस्तान के लोगों से तो कभी-कभी विवाद जरूर हो जाता है, वे लोग जानना चाहते हैं कि योग क्या चीज है और गृहस्थों के लिये उसकी क्या जरूरत है, मगर मुझे आज तक किसी अभारतीय ने यह प्रश्न नहीं किया कि क्या योग हमारे जीवन के लिये आवश्यक है।

मैं जब ऑस्ट्रेलिया में गया तो मैंने देखा कि वहाँ पर एक हजार से ज्यादा योग विद्यालय और केन्द्र हैं। ये सभी वहाँ के शिक्षा विभाग द्वारा स्वीकृत हैं। यह सुनकर भी आपको आश्चर्य होगा कि इन योग केन्द्रों को चलाने वाला एक भी भारतीय नहीं है, सब के सब ऑस्ट्रेलियन है। इनमें 99% महिलाएँ हैं और केवल 1% पुरुष। जब हम हॉल के अन्दर जाते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है मानो किसी देवालय के अन्दर प्रवेश कर रहे हैं। हमारे मन्दिरों में भी वह सात्त्विकता और उत्तम वातावरण देखने को नहीं मिलेगा, जिसे आप वहाँ के योग स्टूडियो में जाकर देखेंगे। यह भी हो सकता है कि जिन सन्त-महात्माओं के चित्र आप लोगों को उन योग केन्द्रों में देखने को मिलें, वे चित्र हमारे मन्दिरों में देखने को न मिलें। आप वहाँ पर गोरखनाथ जी का चित्र देख सकते हैं और उस शिवलिंग को भी देख सकते हैं, जिसको पूजने में कभी-कभी आपको शर्म भी लगती है। पूरे हॉल में सन्त-महात्माओं के चित्र एक

कोने से दूसरे कोने तक लगे रहते हैं और हिन्दुस्तान से मंगायी गयी अगरबत्ती की सुवास फैली रहती है। कहने का तात्पर्य यह कि योग एक ऐसा शब्द है, जो धर्म, जाति और सम्प्रदाय के परे है।

जब मैं अमेरिका में पहली बार आया तो मेरा ऐसा अनुमान था कि वहाँ के लोग बहुत पैसे वाले हैं, ऐशो-आराम से रहना चाहते हैं और उन लोगों के जीवन में इसके सिवाय दूसरा कोई लक्ष्य भी नहीं है। मगर वहाँ जाने के बाद मेरी बहुत-सी धारणायें गलत साबित हो गईं। मुझे वहाँ चर्चों में बुलाया गया और योग के विषय पर बोलने को कहा गया। वहाँ के अनेकों योग केन्द्रों और आश्रमों में मैं जा चुका हूँ। जब मैं मॉन्ट्रियल से साठ मील उत्तर में वेलमोटीन कैम्प गया तो मुझे ऐसा योगाश्रम देखने को मिला जो अभी तक न मुझे बद्रिकाश्रम में, न अमरकंटक में और न कश्मीर में ही देखने को मिला है। 80-90 एकड़ की जमीन में उन लोगों ने जो योगाश्रम बनाकर रखा है, उसकी सुन्दरता को देखकर लगता है जैसे हम लोगों की ऋषि संस्कृति विदेश में मूर्तिमान् हो गई हो। बाहर के देशों में भारतीय संस्कृति देने के आपके पास दो तरीके हैं। एक तरीका तो बहुत कमजोर तरीका है जिसे शायद कोई भी पढ़ा-लिखा आदमी स्वीकार नहीं करेगा, और दूसरा तरीका वैज्ञानिक है, जो योग है।

हमलोगों के देश में योग का अर्थ त्याग से लगाने लगे थे, जादू तथा चमत्कार से लगाने लगे थे। किसी गाँव या शहर में यदि कोई योगी आता था तो लोग यही समझते थे कि एक ऐसा आदमी आया है जो दिल की बात पढ़ सकता है, आदमी को भेड़ बना सकता हे, धन-स्त्री का स्पर्श नहीं करता, आग पर चल सकता है,

तेजाब पी सकता है– ऐसी विचित्र धारणायें थी। ये धारणायें धीरे-धीरे खत्म हुईं। जब सन्त-महात्माओं ने योग के बारे में समझाना शुरू किया तो लोगों ने यही समझा कि सिर नीचे और पैर ऊपर करके थोड़ी-सी कसरत कर लेना ही योग है। बहुत मुश्किल से लोगों के मन के अन्दर से यह विचार भी हटाना पड़ा और आज दुनिया के सामने यह बात बतलानी है कि अपने अन्दर में चेतना का एक ऐसा क्षेत्र है जहाँ पर यदि आप अपने मन, बुद्धि और इन्द्रियों को खींचकर ले जा सकते हो तो आपको परम आनन्द की अनुभूति होगी। बहुत बड़े वैज्ञानिक एडींगटन ने भी यही कहा है कि मन के अन्दर जो इन्द्रियातीत तत्त्व हैं, उनको जानने के लिये इन्द्रिय, बुद्धि और मन को लांघना पड़ेगा। फिर एक ऐसा अनुभव आप को होगा, एक ऐसा आनन्द और शान्ति आप प्राप्त करेंगे, जो सुख और दु:ख दोनों के परे की चीज है, और यह चीज, यह अनुभव बहुत दूर नहीं है, यदि आप निद्रा के बदले ध्यान के द्वारा अपने मन को अन्दर ले जाने का तरीका जानते हों। यह मैंने आप लोगों के सामने भारतीय दृष्टिकोण प्रस्तुत किया।

आज मनोविज्ञान के कुछ विलक्षण विद्वान् यह कहने लगे हैं कि मनुष्य के मन के अन्दर जो चिन्ता, घबराहट, व्याकुलता, हिस्टीरिया और न्यूरोसिस जैसी बीमारियाँ पैदा हो गई हैं, उनका निदान करने में हम योग की क्रियाओं का उपयोग कर सकते हैं। हो सकता है आप यह सोचते हों कि मुझे आत्मा को नहीं जानना है, आध्यात्मिक मार्ग में नहीं जाना है, मैं तो एक छोटा-सा गृहस्थ हूँ और गृहस्थ होने के नाते मुझे एक स्वस्थ मन की आवश्यकता है, ऐसी स्थिति में भी क्या योग मेरे लिये उपयोगी हो सकता है? हाँ, हो सकता है। हाँ, ध्यान के द्वारा यह हो सकता है। जब हम ध्यान के बारे में बतलाते हैं, तब यही समझना कि हम योग के विषय में बातचीत करते हैं।

ध्यान के पहले योग के जो दो क्षेत्र हैं–आसन और प्राणायाम, इनके विषय में भी जो शोध हो चुका है और हो रहा है, भारत में और बाहर के देशों में भी, उसको भी जान लेना जरूरी है। आज अनेकों देशों में वहाँ के शिक्षा विभाग द्वारा योगासन और प्राणायाम स्वीकृत किये गये हैं। लोग कहेंगे कि खेल-कूद और आसन-प्राणायाम में कोई अन्तर नहीं है, किन्तु जो लोग ग्रन्थि-शास्त्र के अध्येता हैं, उन्होंने यह पता लगाया है कि आसन अपनी जगह पर है और खेल या कोई दूसरी कसरत अपनी जगह पर है। कसरत के द्वारा हम जो प्राप्त करते हैं, उससे कहीं अधिक हम योगासनों के द्वारा प्राप्त कर सकते हैं। उदाहरण के लिये, हमारे शरीर में जो थायरॉयड ग्रंथि है, उससे जब हॉरमोन आवश्यकता से अधिक निकलने लगता है, तो उस वक्त आदमी के अन्दर चिड़चिड़ापन और गुस्सा बहुत बढ़ जाता है। वह अपने स्वभाव को, गुस्से को काबू में नहीं कर सकता। क्रोध केवल मानसिक रोग ही नहीं, भावनात्मक रोग भी है और इस रोग का सम्बन्ध हमारे शरीर की ग्रंथियों

से होता है। पिट्यूटरी, पैंक्रियास, पैराथायरॉयड आदि ग्रंथियों पर नियंत्रण प्राप्त करने के लिये योगासनों की आवश्यकता हो जाती है।

अब आप पूछेंगे कि किस वैज्ञानिक आधार पर यह कहा जा सकता है कि आसनों का असर ग्रंथियों पर पड़ता है। इस क्षेत्र में पाँच जगह सबसे बड़े अनुसंधान हुए हैं। जर्मनी में पिट्यूटरी ग्रंथि पर जो रिसर्च हुई है, उसके आधार पर अभी भी कैंसर के रोग के उपचार में योग का उपयोग किया जा रहा है। ऐसी रिसर्च अमेरिका और रूस में भी हुई है। योगासनों का पिनीयल और पिट्यूटरी ग्रंथियों की कार्यक्षमता पर क्या असर होता है, उसकी रिसर्च तो पोलैण्ड में दो साल पहले ही हो गई है। हिन्दुस्तान में भी भारत सरकार के तत्त्वावधान में पैंक्रियास ग्रंथि पर जो अनुसंधान हुआ है, उसने यह एक नया तथ्य उजागर किया है कि योग के द्वारा यह ग्रंथि इतनी प्रभावित हो सकती है कि मधुमेह जैसी असाध्य बीमारी, जो इस ग्रंथि के निष्क्रिय होने से होती है, दूर हो जाती है। राजस्थान सरकार के तत्त्वावधान में एक ऐसा अस्पताल है, जहाँ पर योग के द्वारा मधुमेह के रोग की चिकित्सा होती है। उसी प्रकार प्राणायाम द्वारा शरीर के अन्दर में जो विषाक्त द्रव्य होते हैं, उनको दूर किया जा सकता है और दूर किया जा रहा है।

आसन-प्राणायाम अपनी जगह पर ठीक हैं, मगर सबसे बड़ी चीज है ध्यान। ध्यान के दो पक्ष हैं, पहला जिसमें हमारी वृत्तियाँ अन्तर्मुखी होती हैं और थोड़ी देर के लिये हम अपने चारों तरफ के वातावरण को भूल जाते हैं। इसके दूसरे पक्ष में हमारी परम चेतना राम, शिव, देवी या जिस रूप पर ध्यान किया जाता है, उस रूप में अपने अन्दर में प्रकट होती है।

ध्यान का एक सरल तरीका है–जप। इसको आप लोग धर्म का अंग मानते हैं, बिल्कुल सही बात है। किन्तु जब यह जप सही तरीके से किया जाता है तो इसका हमारे मन के अन्दर चेतना पर, अर्द्धचेतन मन पर, अचेतन मन पर, संस्कारों पर और व्यक्तित्व की कुण्ठाओं पर भी गहरा असर पड़ता है। हमारे अन्दर एक नये व्यक्तित्व का निर्माण शुरू हो जाता है। अभी जो रिसर्च हुई है उससे पता चला है कि हमारे दिमाग से जो मस्तिष्क तरंगें निकलती हैं, जप से उनको भी नियंत्रित किया जा सकता है। अभी तक तो वैज्ञानिक दिमाग को केवल मांस, स्नायु, हड्डी और खून की नलियाँ ही मानते थे, किन्तु अब पता चला है कि इस दिमाग से जो तरंगें निकलती हैं, उनको नियंत्रित करने से हम अपने अन्दर एक बहुत बड़ी शक्ति को प्राप्त कर सकते हैं। इस तरह जप करने से जब मस्तिष्क तरंगों पर नियंत्रण होता है, तो दिमाग की ताकत बढ़ती है और मस्तिष्क में सोये हुये केन्द्र जगने लगते है। इन सोये हुये केन्द्रों के जगने से हमारे अन्दर कई प्रकार की शक्तियाँ प्रकट होने लगती हैं। जो लोग योगी, मुनि, ऋषि या बड़े-बड़े वैज्ञानिक हो गये, जो अन्त:प्रेरणा के स्तर पर काम करते थे उनके ये सुप्त केन्द्र जगे हुये थे। मनुष्य के

अन्दर जो प्रज्ञा-बुद्धि का स्तर है, वह योग के द्वारा खुलता है। इसको हमारे यहाँ तीसरी आँख का खुलना भी कहते हैं। यही ज्ञान का दरवाजा है। इसी दरवाजे को खोलने के लिये, जिसके बारे में योगीराज अरविन्द ने, अल्बर्ट हक्सले ने, ऐनी बेसेन्ट ने भी बहुत कुछ लिखा और कहा है, योग एक बहुत सीधा, सरल रास्ता है।

मैं आपको यही बतलाना चाहता हूँ कि यदि आपके मन में यह गलतफहमी है कि योग केवल एक सम्प्रदाय के लोगों की चीज है, जिसके लिये घर-गृहस्थी को छोड़कर या वस्त्रों को बदलकर या जिन्दगी की जरूरतों को छोड़कर आना होगा, तो इस विचार को एकदम छोड़ दीजिये। जिस प्रकार आप कोट-पतलून पहनकर विश्राम कर सकते हैं, उसी प्रकार आप कोट-पतलून पहन कर भी अपने चित्त को अन्तर्मुख कर सकते हैं। आप कोई भी भोजन करें, किसी भी तरह से रहें, आपको अपने चित्त को अन्तर्मुखी करने का पूरा अधिकार है। केवल इतना ही समझना है आपको कि जब आप अपने मन को बहिर्मुखी से अन्तर्मुखी करते हैं तो आपके अन्दर शक्ति का सृजन होता है। यह शक्ति का सृजन आपको अपने गृहस्थाश्रम में, अपने दैनिक जीवन में बहुत मदद पहुँचायेगा।

–साउथ हॉल हिन्दू सेन्टर, लन्दन, 1971

तंत्र शास्त्र में चेतना की मीमांसा

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

तंत्र का उद्देश्य व्यक्तिगत चेतना का विस्तार करना और अंतर्निहित प्रसुप्त ऊर्जा को जागृत करना है। इस तांत्रिक प्रक्रिया की अन्तिम अवस्था में व्यक्तिगत चेतना एवं ऊर्जा, ब्रह्माण्डीय चेतना एवं ऊर्जा के साथ एकाकार हो जाती है। अत: लक्ष्य तक पहुँचने के लिए साधक को मन एवं चेतना की सम्पूर्ण सजगता, समझ और अनुभव विकसित करना चाहिए।

चेतना की प्रकृति

अनुभव के दो क्षेत्र होते हैं, परा और अपरा। परा सूक्ष्म अनुभव से सम्बन्धित होता है, जबकि अपरा स्थूल अनुभवों का क्षेत्र होता है। परा अवस्था में चेतना देश, काल तथा वस्तु के प्रभावों के अधीन नहीं होती, बल्कि वह इन सब से परे पूर्णतया शांत तथा आकाश की तरह सर्वव्यापी होती है। शांति की इस अवस्था में चेतना के तीन गुण–सत्, चित् और आनन्द प्रदीप्त रहते हैं। परा अवस्था में चेतना सर्वव्यापी, सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान होती है।

अपरा अवस्था में चेतना जब शक्ति के साथ व्यवहार करती है तो स्थूल अनुभवों का जन्म होता है। इस स्तर पर चैतन्यता की स्थिति रहती है। चैतन्यता का अर्थ है अपने अस्तित्व के प्रति, अपने जीवन के प्रति सजग होना। व्यक्ति के द्वारा अंतर्निहित चेतना को एक स्वतंत्र घटक के रूप में अनुभव नहीं किया जाता, बल्कि इसे अपने जीवन से सम्बन्धित चेतना के रूप में अनुभव किया जाता है। अर्थात् इस स्थिति में जब कभी चेतना का अनुभव किया जाता है, वह 'मैं जी रहा हूँ, मैं जीवित हूँ' के अनुभव के रूप में अपने जीवन से सम्बन्धित होता है। इस अनुभव को चैतन्यता कहा जाता है और इस स्थिति से व्यक्ति सूक्ष्म या स्थूल, दोनों आयामों तक पहुँच सकता है। जब शक्ति के साथ यह सम्बन्ध स्थापित हो जाता है और चैतन्यता के द्वारा इसका संचालन होने लगता है, तब व्यक्ति अपने आपको परा, अव्यक्त सत्ता के बजाय अपरा, व्यक्त सत्ता के रूप में अनुभव करता है। इस अवस्था में चेतना संसार के साथ विभिन्न प्रकार की प्रतिक्रियाएँ करती है।

संसार में चेतना अपनी प्रतिक्रिया नाम, रूप तथा विचार को पहचानकर अभिव्यक्त करती है। जैसे गुरु शब्द का अपने आप में कोई अर्थ नहीं होता, लेकिन गुरु शब्द सुनकर कोई व्यक्ति हिमालय में ध्यान लगाए किसी लंगोटीधारी साधु की कल्पना कर सकता है, क्योंकि उसकी चेतना में गुरु की वही छवि बसी है। लेकिन यदि एक व्यक्ति विशेष का नाम लिया जाए, जैसे स्वामी शिवानन्द,

तो यह नाम एक विशेष व्यक्ति को एक विशेष रूप से जोड़ता है। मन में नाम के साथ-साथ उस नाम से सम्बन्धित रूप भी उजागर होता है। नाम और रूप के साथ-साथ स्वामी शिवानन्द में निहित गुणों की पहचान भी होती है–'वे एक अच्छे इन्सान हैं। वे धर्मनिष्ठ, शुद्ध, पवित्र और समदृष्टि महात्मा हैं। वे भगवान स्वरूप हैं।' ऐसे विचार आने लगते है जो स्वामी शिवानन्द के व्यक्तित्व को दर्शाते हैं। इस प्रकार नाम, रूप और विचार वे तीन चीजें हैं जिनके साथ चेतना इस संसार में व्यवहार करती है।

चेतना की चार अवस्थाएँ

इस भौतिक आयाम में व्यक्त चेतना की चार अवस्थाएँ होती हैं जिनका साधक के द्वारा अनुभव और उपयोग किया जा सकता है। तंत्र के अनुसार ये चार अवस्थाएँ जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति, तथा तुरीय के नाम से जानी जाती हैं। आधुनिक मनोविज्ञान मन को चेतना के तीन स्तरों के अंतर्गत वर्गीकृत करता है–चेतन मन, अर्द्धचेतन मन तथा अचेतन मन। ये क्रमश: जाग्रत, स्वप्न तथा सुषुप्ति की अवस्थाओं को दर्शाते हैं। वेदान्त परम्परा के मुख्य उपनिषद, माण्डूक्य उपनिषद् की विषय वस्तु

चेतना और उसकी विभिन्न अवस्थाएँ हैं, जिन्हें वैश्वानर, तेजस, प्रज्ञा तथा तुरीय नाम से सम्बोधित किया गया है।

चेतन, अर्द्धचेतन तथा अचेतन शब्दों के प्रयोग के द्वारा सजगता के उस स्तर की व्याख्या की जाती है जिसे मन किसी निश्चित समय पर धारण करता है। ये मन की व्याख्या नहीं करते, बल्कि जाग्रत अवस्था, स्वप्न अवस्था और सुषुप्ति अवस्था में चेतना की सीमा बतलाते हैं। दैनिक जीवन में पहली तीन अवस्थाओं का अनुभव नियमित होते रहता है। चौथी अर्थात् तुरीय अवस्था को कभी-कभी एक झलक के रूप में अनुभव किया जाता है, जैसे ध्यान के दौरान कभी अचानक सजगता सभी दिशाओं में फैल जाती है और हर चीज के प्रति सजगता रहती है, फिर भी व्यक्ति अनासक्त बने रहता है।

जाग्रत अवस्था

चेतना की पहली अवस्था है जाग्रत अवस्था, जिसे चेतन मन के रूप में समझ सकते हैं। यह अंतरात्मा तथा संसार के बीच व्यवहार की सजगता दर्शाती है। दूसरे शब्दों में, यह चेतना की ऐसी अवस्था है जो व्यक्त आयाम से सम्बन्धित रहती है।

माण्डूक्य उपनिषद् में चेतन मन का उल्लेख वैश्वानर के रूप में किया गया है। वैश्वानर दो शब्दों, विश्व और नर से मिलकर बना है। जाग्रत अवस्था में मन विश्व से पूरी तरह सम्बन्धित रहता है। नर का तात्पर्य क्षय से भी है। इस प्रकार वैश्वानर का तात्पर्य उस चेतना से है, जो पूर्ण रूप से प्रकृति से सम्बन्धित है और जो प्रकृति के साथ अपने व्यवहार के क्रम में परिवर्तन, रूपान्तरण और विकास की प्रक्रिया से गुजरती है।

उपनिषद् के अनुसार वैश्वानर के उन्नीस मुख होते हैं, जो इन्द्रियों और मन की ऐसी क्षमताओं की ओर इंगित करते हैं, जिनसे व्यक्ति संसार से सम्बन्धित जानकारियों को प्राप्त करता है, उन्हें उचित क्रम में संगठित करता है और फिर प्रतिक्रिया करता है। पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ और पाँच कर्मेन्द्रियाँ वैश्वानर के दस मुखों का निर्माण करती हैं, जिनसे सांसारिक सुखों का आनन्द लिया जाता है। अन्त:करण के मनस्, बुद्धि, चित्त और अहंकार रूपी चार अंग होते हैं और इसके अलावा पंचतत्त्व भी होते हैं। उपरोक्त सभी मिलकर उन्नीस हो जाते हैं। इस प्रकार चेतन अवस्था में वैश्वानर उपरोक्त उन्नीस क्षमताओं का उपयोग अपने परिवेश तथा संसार से सूचनाओं को प्राप्त करने, उनका विश्लेषण करने और फिर प्रतिक्रिया करने के लिए करता है। वैश्वानर बाह्य घटनाओं तथा इन्द्रिय विषयों की सजगता की ओर ले जाता है।

जाग्रत अवस्था जीवन के आधे से अधिक भाग का एक मुख्य अनुभव होती है। चौबीस घंटों में से लगभग बारह घंटे जाग्रत अवस्था में जो बिताये जाते हैं। इस

पूरे समय के दौरान चेतना बिखरी हुई होती है। यह बहुत कम बार केन्द्रित होती है, बल्कि हमेशा इच्छाओं, वासनाओं तथा आसक्तियों से युक्त रहती है तथा इसे पूरा करने के लिए अपनी ऊर्जा का इस्तेमाल करती है।

जाग्रत अवस्था में सभी इन्द्रियाँ सक्रिय होती हैं, सभी मानसिक क्षमताएँ अपने चरम पर होती हैं और चेतना वातावरण, इन्द्रियों तथा इन्द्रियग्राह्य वस्तुओं से जुड़ी रहती है। जाग्रत अवस्था में सजगता शत-प्रतिशत सक्रिय रहने में सक्षम होती है। यह अलग बात है कि व्यक्ति की सजगता का वास्तविक स्तर क्या रहता है। सम्भावना और वास्तविकता में प्राय: काफी अन्तर होता है। यदि कोई एक बड़े हॉल में एक टॉर्च जलाता है, तो यह हॉल के केवल एक क्षेत्र को प्रकाशित करेगा। इसी प्रकार जिन व्यक्तियों का अपनी मानसिक क्षमताओं पर नियंत्रण नहीं होता, वे अपने जीवन में चेतना के सम्पूर्ण दायरे का अनुभव नहीं कर पाते। वे केवल उन्हीं क्षेत्रों के प्रति सजग होते हैं जहाँ तक इन्द्रिय-चेतना पहुँचती है।

इन्द्रिय-चेतना सजगता को दिशा-निर्देशित करने का एक मुख्य कारक है। जब कोई सुन्दर और आकर्षक वस्तु दिखती है तो यह इन्द्रिय-चेतना है। जब स्वादिष्ट भोजन का रस लिया जाता है तो यह इन्द्रिय-चेतना है। किसी वस्तु को छूने से जो अनुभव होता है वह इन्द्रिय-चेतना के कारण होता है। प्रतिदिन के क्रिया-कलापों में व्यक्ति किसी एक इन्द्रिय की चेतना का ही अनुभव कर रहा होता है। जाग्रत अवस्था में प्राय: आंशिक सजगता का ही इस्तेमाल किया जाता है। सम्पूर्ण सजगता की क्षमता जाग्रत अवस्था में मौजूद तो रहती है, लेकिन केवल ऐसे योगी, जिन्होंने अपनी चेतना पर नियंत्रण प्राप्त कर लिया है, इसका अनुभव और उपयोग कर पाते हैं। उनका मन किसी एक अनुभव, संवेदना या ज्ञान तक सीमित नहीं रहता, बल्कि वे अपने इर्द-गिर्द घटित हो रही प्रत्येक घटना का एक द्रष्टा के रूप में अवलोकन करने में सक्षम होते हैं।

स्वप्न अवस्था

स्वप्न की अवस्था में व्यक्ति ऐसी सूक्ष्म प्रक्रियाओं, अनुभवों, दृश्यों तथा विचारों के प्रति भी सजग रहता है, जो भौतिक आयाम से सम्बन्धित नहीं होते। यह सूक्ष्म शरीर अर्थात् सूक्ष्म आयाम का एक अनुभव है। व्यक्ति सो नहीं रहा होता, बल्कि जगा होता है, और साथ ही साथ जगा नहीं होता, बल्कि सो रहा होता है। यहाँ नींद गहरी नहीं होती और न ही सम्पूर्ण सजगता होती है। बीच की इस ऊँघने जैसी स्थिति को ही अर्द्धचेतन या स्वप्न अवस्था कहते हैं। यहाँ न सजगता का पूर्णतया लोप होता है, और न ही इन्द्रिय विषयों के साथ प्रत्यक्ष सम्बन्ध रहता है। फिर भी अपने अस्तित्व के बारे में एक सजगता बनी रहती है जो मन को सक्रिय रखती है।

स्वप्न अवस्था में चेतना अपने ही प्रतिबिंबों, प्रभावों तथा रचनाओं को प्रदर्शित करती है। माण्डूक्य उपनिषद् में स्वप्न की अवस्था को तैजस नाम से सम्बोधित किया गया है। तैजस मन या चेतना का वह क्षेत्र है जहाँ सूक्ष्म, अदृश्य अनुभवों के द्वारा आनन्द की प्राप्ति होती है। मन अन्दर-ही-अन्दर एक काल्पनिक दुनिया बना लेता है, और उसी में खुश रहता है। तैजस की सात बाँहों तथा उन्नीस मुखों का उल्लेख मिलता है। वैश्वानर और तैजस के बीच, जाग्रत अवस्था और स्वप्न अवस्था के बीच जो अन्तर होता है, वह मन और इन्द्रिय विषयों के बीच अलग-अलग सम्बन्ध के आधार पर होता है। पहली अवस्था में मन का इन्द्रिय विषयों से सीधा सम्बन्ध होता है जबकि दूसरी अवस्था में विषयों से प्राप्त अनुभवों के आधार पर अन्त:करण में एक काल्पनिक दुनिया की रचना की जाती है।

स्वप्न अवस्था की एक निश्चित अवधि होती है। कुछ लोग स्वप्न बिल्कुल नहीं देखते, कुछ लोग एक घण्टे तक स्वप्न देखते हैं, और कुछ लोग छ: घण्टों तक स्वप्न देखते हैं। इस सीमित अवस्था में चेतना अपने को ही विभिन्न प्रतीकों, प्रभावों, विचारों, भय, आकांक्षाओं, वासनाओं, खुशी, अवसाद, चिंता इत्यादि के रूप में प्रदर्शित करती है। चेतना के द्वारा हर चीज का मानसिक पर्दे पर चित्रण किया जाता है और एक अलग दुनिया की रचना की जाती है जो भ्रम के कारण वास्तविक मालूम पड़ती है। जैसे कोई व्यक्ति डरावना सपना देखता है तो शरीर से पसीना निकलने लगता है, भय एवं चिंता का अनुभव होता है और स्वप्न वास्तविक प्रतीत होने लगता है। यह चेतना का मन के पर्दे पर एक प्रदर्शन है। जो कुछ भी चेतना के द्वारा प्रदर्शित किया जाता है, व्यक्ति उसे जीना प्रारम्भ कर देता है।

स्वप्न निद्रा की केवल उस अवस्था को नहीं दर्शाता जिसमें व्यक्ति स्वप्न देखता है, बल्कि यह चेतन सजगता की उस सीमा की ओर इंगित करता है जिसे शत-प्रतिशत से घटाकर पचास प्रतिशत कर दिया गया है। चूँकि यह आधी हो चुकी होती है, इसलिए व्यक्ति न यहाँ होता है और न वहाँ। वह न तो बाह्य घटनाओं के प्रति पूर्ण रूप से सजग एवं सावधान रहता है, और न ही आंतरिक जगत् के प्रति। वह सम्पूर्ण सजगता तथा सजगता के अभाव की स्थिति के बीच फँसा रहता है।

तैजस का तात्पर्य प्रकाश से है। इस अवस्था में साधक मन तथा प्राण, दोनों के प्रकाश के प्रति अंशत: सजग रहता है। जब चेतना दसों इन्द्रियों से अलग हो जाती है और स्थूल शरीर से सूचनाएँ प्राप्त करना बंद कर देती है तब भी मन सक्रिय रहता है और सूचनाओं का स्रोत बन जाता है। जाग्रत अवस्था में साधक सिर्फ इन्द्रियों के प्रकाश के प्रति सजग रहता है जबकि तैजस की मध्य अवस्था में साधक मन तथा प्राण, दोनों के प्रकाश के प्रति साथ-साथ सजग बने रहता है।

किसी नेत्रहीन व्यक्ति का उदाहरण लिया जा सकता है जो देख नहीं सकता है फिर भी उसमें आस-पास के वातावरण के सम्बन्ध में एक परिकल्पना होती है। वह चीजों को पहचान सकता है और अपने आन्तरिक नेत्र की मदद से देख भी सकता है। कुछ लोग ऐसा सोचते हैं कि नेत्रहीन लोगों में रंगों को पहचानने की क्षमता नहीं होती, पर ऐसा नहीं है। उन्हें रंगों की पहचान होती है और प्राय: वे रंगों को पहचान लेते हैं। वे स्वप्न में केवल काला और सफेद रंग नहीं देखते, जैसा कि बहुत-से लोग सोचते हैं। यदि उनमें नेत्रों से देख पाने की क्षमता नहीं है तो इसका अर्थ है कि उन्होंने कभी भी रंगों को नहीं देखा है। तो फिर वह कौन-सी चीज है जिसने उन्हें रंगों और वस्तुओं के विषय में समझ प्रदान की है? वास्तव में वह मन का प्रकाश है जिसका माण्डूक्य उपनिषद् में तैजस के रूप में उल्लेख किया गया है।

स्वप्न अर्थात् अर्द्धचेतन अवस्था में एक ही समय में दो आयामों को अनुभव किया जाता है। स्थूल जगत एवं सूक्ष्म जगत्, दोनों के प्रति सजगता रहती है तथा इन दोनों में सामंजस्य के प्रति भी सजगता बनी रहती है।

सुषुप्ति की अवस्था

सुषुप्ति अर्थात् गहरी निद्रा की अवस्था में चेतना में शान्ति एवं स्थिरता बनी रहती है। मनोविज्ञान के अनुसार सुषुप्ति अवस्था की तुलना मन के अचेतन क्षेत्र से की जा सकती है। माण्डूक्य उपनिषद् में सुषुप्ति की अवस्था को प्रज्ञा के नाम से जानते हैं, चेतना की गहरी, विचारहीन तथा स्वप्न रहित स्थिति। इस स्थिति में हर चीज विलुप्त हो जाती है। यह एक ऐसा आयाम है जहाँ देश, काल एवं वस्तु बिल्कुल स्थिर हो जाते हैं तथा इस अवस्था में प्रगति कर लेने के बाद उपरोक्त तीनों चीजों की परिकल्पना भी समाप्त हो जाती है।

आधुनिक शोध के अनुसार गहरी निद्रा की यह अवस्था दो घंटे तक बनी रहती है, रात के लगभग 2 बजे से सुबह 4 बजे तक और इस दौरान पीनियल ग्रंथी द्वारा स्रावित मेलेटोनिन हॉर्मोन साधक को गहरी अवस्था में ले जाता है जहाँ शान्ति, आनन्द और स्थिरता का अनुभव होता है।

अगर कोई व्यक्ति आधे घंटे के लिए शान्ति से बैठ जाए और इस दौरान कोई कार्य नहीं करे तो अचानक उसके अन्दर एक उत्सुकता का जन्म होता है और

वह घड़ी में समय देखकर सोचता है कि कितना समय बीत गया। जबकि सुषुप्ति अवस्था में आठ घंटे बहुत तेजी से बीत जाते हैं। वहाँ वातावरण, इन्द्रियों तथा इन्द्रिय-विषयों के प्रति कोई सजगता नहीं रहती और न ही कोई मानसिक चित्र उभरता है। एक ऐसा क्षण आता है जब व्यक्ति अपने सभी तनावों को निद्रा की अवस्था में भुला देता है और पूर्ण शान्ति का अनुभव करता है। भले ही सुषुप्ति में शान्ति की सजगता नहीं रहती पर इसका अनुभव होता है। यदि सजगता सक्रिय बनी रहे तो शान्ति क्या है, इसकी पहचान हो पाएगी। निद्रा की अवस्था के प्रति सजग रहना इस बात को जानने की स्थिति है कि 'सोते समय भी मैं जगा हूँ।'

अचेतन अवस्था में मन इन्द्रियों और बाह्य वस्तुओं से सम्बन्धित नहीं रहता, यह अपने आप में ही स्थिर हो जाता है। मन और इसकी ऊर्जा का यह संकेन्द्रण ही निद्रा की अवस्था है। इसे योगनिद्रा में अनुभव किया जा सकता है। प्राय: लोग योगनिद्रा के प्रारम्भिक निर्देशों जैसे 'आराम से लेट जाइए, शरीर को शिथिल कीजिए' को सुनते ही सो जाते हैं और जब 'हरि: ॐ तत्सत्, योगनिद्रा का अभ्यास समाप्त हुआ, कृपया उठकर बैठ जाइए' जैसे अन्तिम निर्देश दिए जा रहे होते हैं, तब वे जग जाते हैं। वे प्राय: विस्मित होते हैं क्योंकि उन्हें लगता है कि वे सारा समय जगे थे, बिल्कुल सोए नहीं, फिर मन आखिरकार कहाँ चला गया? यह सुषुप्ति की अवस्था है जहाँ मन बाह्य वातावरण से अलग हो जाता है और व्यक्ति कुछ क्षणों के लिए शान्ति का अनुभव करता है। यदि किसी चंचलता से सम्पर्क बना रहता तो चेतना की हलचल शान्ति का अनुभव नहीं करने देती। इसलिए योगनिद्रा के दौरान यदि सजगता पूरी तरह जाग्रत और चेतन न भी हो, तो भी यह अनुभव व्यक्ति के जीवन में शान्ति की प्राथमिक झलकों को दर्शाता है। निद्रा की स्थिति में व्यक्त संसार की सजगता को भीतर के अदृश्य जगत् देखने के लिए अन्दर खींच लिया जाता है और जब सजगता का अदृश्य जगत् से सामना होता है तो कोई प्रत्यक्ष बोध नहीं होता। इसलिए योग में निद्रा को शून्यता की स्थिति कहते हैं। शून्यता और निद्रा का अनुभव ध्यान की एक अवस्था है।

निद्रा और प्रज्ञा चेतना की ऐसी अवस्था को दर्शाते हैं जहाँ देश, काल और वस्तु से सम्बन्धित विचार पूर्णत:

समाप्त हो जाते हैं, लेकिन सजगता और ज्ञान विद्यमान रहते हैं। ज्ञान के इस आयाम को प्रज्ञा के रूप में जानते हैं। इस स्थिति में केवल मन के प्रकाश का अनुभव होता है, प्राणों या इन्द्रियों का नहीं। प्रज्ञा शब्द भी 'ज्ञा' धातु से आया है और यह एक ऐसी अवस्था है जहाँ सम्पूर्ण ज्ञान एकत्रित रहता है और मन इस ज्ञान के प्रति सजग रहता है।

सुषुप्ति की अवस्था इन्द्रियों और इन्द्रिय-विषयों से सजगता के अलगाव को दर्शाती है। इस अवस्था में इन्द्रियों को मन से अलग किया जा चुका होता है। जब व्यक्ति अंतर्मुखी होने लगता है तो मन और इन्द्रियों की चंचलता कम होने लगती है। सक्रिय रहने पर मन और इन्द्रियाँ उत्तेजित होते हैं, पर जब व्यक्ति अंतर्मुखी होता है और मन को संतुलित एवं संयमित रख पाता है तब वह मानसिक उत्तेजनाओं के प्रभावों से मुक्त हो जाता है। रात को सोते समय ऐसा ही होता है। इन्द्रियजनित अनुभवों की सजगता समाप्त हो जाती है, इसके स्थान पर मानसिक सजगता सशक्त हो जाती है।

तुरीयावस्था

आधुनिक मनोवैज्ञानिकों ने चेतना की चौथी अवस्था अर्थात् परम चेतना के विषय में चर्चा करना शुरू कर दिया है। पाश्चात्य देशों के लिए यह अवधारणा भले ही नई हो, लेकिन पूर्वी देशों के लिए यह चेतना का कोई नया क्षेत्र नहीं है। चौथी अवस्था अर्थात् तुरीय अवस्था को चेतन, अर्द्धचेतन तथा अचेतन, इन सभी स्तरों से परे माना जाता है जहाँ सर्वज्ञता, आनन्द, शान्ति और शुद्धता का अनुभव होता है।

तुरीय अवस्था में साधक चेतना के सम्पूर्ण क्षेत्र में पूरी तरह सतर्क हो जाता है। यहाँ सतर्क होने का अर्थ है अपने व्यक्तित्व में अंतर्निहित सभी क्षमताओं का तीक्ष्ण होना, जिससे व्यक्ति हर आवश्यक क्रिया के लिए सजगतापूर्वक तैयार रहे। इस अवस्था में साधक सम्पूर्ण चेतना के प्रकाश का अनुभव कर पाता है, वह भूत, वर्त्तमान और भविष्य का द्रष्टा हो जाता है।

माण्डूक्य उपनिषद् में भी चौथी अवस्था को तुरीय नाम से ही संबोधित किया गया है और इसे एक ऐसी उच्च स्थिति के रूप में वर्णित किया गया है जहाँ मन इन्द्रियों और इन्द्रिय-विषयों के प्रभावों से बिल्कुल अलग हो जाता है। मन अपने संकल्पों और वासनाओं से प्रभावित नहीं होता। यह हर चीज से स्वतंत्र हो जाता है और देश, काल तथा वस्तु के प्रभाव से परे एक स्वतंत्र सत्ता के रूप में बने रहता है।

योगियों ने इस अवस्था को अचेतन से भी परे बताया है जहाँ मन अपने सारे बंधनों को तोड़ देता है। तुरीयावस्था में साधक आंतरिक और बाह्य जगत् को एकीकृत रूप में देखता है, वह इन दोनों के बीच कोई अन्तर नहीं करता। हमारी वर्त्तमान अवस्था में आंतरिक और बाह्य जगत् के अनुभवों में भिन्नता है। मन और इन्द्रियों के बीच खींचातानी की स्थिति रहती है और यही भिन्नता के रूप में प्रतीत होती है।

जब यह भिन्नता समाप्त हो जाती है तब मन बिल्कुल संतुलित हो जाता है, मानसिक उत्तेजनाएँ शान्त हो जाती हैं, मानसिक भटकाव की प्रवृत्ति कम हो जाती है और मानसिक शक्ति जागती है। मन इतना शक्तिशाली हो जाता है कि यह बाह्य वातावरण को भी प्रभावित कर सकता है। मन में सम्पूर्ण चेतना अवतरित होती है और इन्द्रियों का द्रष्टा हो जाता है। वह स्वयं का भी द्रष्टा बन जाता है और अपने व्यवहार के साथ-साथ इन्द्रियों को भी निर्देशित करता है।

तुरीय अवस्था प्राप्त करने के बाद साधक स्वयं को नकारात्मक घटनाओं से अप्रभावित रखते हुए बाह्य जगत् के सारे क्रिया-कलापों का संचालन कुशलतापूर्वक करता है। वह भरे बाज़ार में भी शान्ति, शुद्धता तथा आनन्द की स्थिति कायम रख सकता है। स्वामी सत्यानन्द जी कहा करते थे, हिमालय में शान्ति नहीं और संसार में कोलाहल नहीं। जो कुछ भी अनुभव किया जाता है वह चेतना का प्रतिबिम्ब मात्र है। यदि मन शुद्ध और शान्त है तो मुंगेर बाजार के बीच भी यह शान्ति बनी रहेगी। लेकिन अगर मन अशुद्ध, अशांत और उद्विग्न है तो हिमालय की किसी सुदूर गुफा में भी अशांति तथा भटकाव की स्थिति बनी रहेगी। यदि साधक जीवन की हर परिस्थिति में मन की शांति एवं शुद्धता की अवस्था को कायम रख पाता है तब इसका अर्थ है कि वह तुरीय अवस्था को प्राप्त कर चुका है।

तुरीय अवस्था तभी आती है जब साधक जाग्रत, स्वप्न और निद्रा की अवस्था से गुजर चुका होता है। तुरीय अवस्था मानव-मन की ज्ञात सीमाओं से परे है जहाँ देश, काल और वस्तु की कोई सीमा शेष नहीं रहती। योगियों ने हमेशा कहा है कि मन में दिव्यता को अनुभव करने की क्षमता है, क्योंकि यह ऊर्जा का ही एक रूप है।

सिद्ध महात्मा तुरीय अवस्था को स्वाभाविक रूप से प्राप्त कर लेते हैं। इस अवस्था को पा लेने के बाद समय की कोई सीमा नहीं रह जाती। ऐसे सिद्ध पुरुष किसी व्यक्ति को एक खुली किताब की तरह उसके हर आयाम को देख लेते हैं। वे जीवन के सभी अध्यायों अर्थात् भूत, भविष्य एवं वर्तमान को जान लेते हैं।

तुरीय अवस्था प्रकृति के सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ तथा सर्वव्यापी स्वरूप को इंगित करती है। लेकिन तुरीय अवस्था से भी परे शुद्ध चेतना की एक और अवस्था होती है जिसे तुरीयातीत के नाम से जानते हैं। इसका प्रकृति से कोई सम्बन्ध नहीं होता, यह प्रकृति के परे की दिव्य स्थिति है।

इस प्रकार, प्राचीन यौगिक विचारधारा ने मन और चेतना के सिद्धान्तों का बहुत गहराई से निरूपण किया है, जो आधुनिक मनोविज्ञान की सीमाओं से भी परे है। ऋषि-मुनियों ने गहन चिंतन और व्यावहारिक अनुभव द्वारा इन विषयों की व्याख्या की है। इन्हीं विचारों और सिद्धान्तों को आधुनिक मनोवैज्ञानिक समझने की कोशिश कर रहे हैं, इन पर शोध कर रहे हैं तथा मनोविज्ञान के क्षेत्र में बेहतर काम के लिए एक ठोस आधार प्रदान करने हेतु अपना रहे हैं।

स्वाध्याय का महत्त्व

स्वामी सत्यसंगानन्द सरस्वती

साधना के समय कभी-कभी ऐसे भी क्षण आते हैं जब आप निराश हो जाते हैं तथा आपकी श्रद्धा विचलित होने लगती है। दीर्घकाल तक परिश्रमपूर्वक नियमित साधना करने पर भी जब कोई आंतरिक अनुभूति नहीं होती तब आपको अन्तिम लक्ष्य मृगमरीचिका जैसा लगता है। जब तक आपको अन्तिम अनुभूति नहीं होती, वह आपको काल्पनिक, दुर्लभ तथा पहुँच से परे लगती है। कदाचित् आप अपने लक्ष्य को पाने में असफल रहते हैं तो उत्साह के अभाव में, भ्रम के कारण या तो साधना में कटौती करते हैं, अथवा उसे एकदम बन्द कर देते हैं।

अब यदि ऐसे समय आपको उत्साहित करने वाला न हो, आपकी विचलित श्रद्धा को दृढ़ करने वाला न हो, तो आप हताश हो सकते हैं। ऐसा तो कभी भी, किसी के भी साथ हो सकता है। आध्यात्मिक साधना में ऐसे क्षण तो आते ही हैं। यह आशा करना कि हर समय आप प्रफुल्लित, आशान्वित और श्रद्धावान् बने रहेंगे, गलत है। ऐसा सोचना अव्यावहारिक है।

अनिर्णय, अविश्वास और उत्साह में कमी हमारे अस्तित्व के अनिवार्य अंग हैं। अब यह आपके ऊपर निर्भर है कि आप इनसे किस प्रकार अप्रभावित रह सकते हैं। सूरज भी तो कभी-कभी बादलों से ढक जाता है, परन्तु जैसे ही बादल छँटते हैं, वह पहले से कहीं अधिक चमकदार दिखता है। इसलिये इन अवसरों पर डरने की कोई आवश्यकता नहीं है। जब आपको लगे कि आपकी श्रद्धा और विश्वास की जड़ें हिल रही हैं तब इस स्थिति से भी कुछ-न-कुछ प्राप्त कीजिये। जब शंका और अविश्वास के बादल छँट जायेंगे तब आपको साधना में पहले से कहीं अधिक उत्साह, आनन्द एवं संतोष का अनुभव होगा।

साधना के साथ अपने उत्साह और प्रेरणा को तीव्र करने की युक्तियाँ भी खोजते रहिये। इनमें से अत्यन्त उपयोगी और रचनात्मक युक्ति स्वाध्याय को माना जाता

है। इसके अंतर्गत शास्त्रों का अध्ययन, आत्म-निरीक्षण और आत्म-विश्लेषण आते हैं। साधक को अपने साधनामय जीवन में स्वाध्याय को कभी नहीं छोड़ना चाहिए।

हर समय संत-महात्माओं का सत्संग करना तथा प्रवचन सुनना सम्भव नहीं होता, परन्तु आध्यात्मिक साहित्य का कहीं भी और कभी भी स्वाध्याय किया जा सकता है। जब भी आपको लगे कि आपका मन साधना में नहीं लग रहा है, आपकी श्रद्धा और विश्वास डगमगा रहे हैं तो उन्हें पुनर्स्थापित करने के लिये स्वाध्याय प्रारम्भ कीजिये। इससे आप पुन: सन्तुलित होंगे तथा आपकी श्रद्धा और विश्वास पूर्ववत् दृढ़ होंगे। जब आप उन महान् आत्माओं के जीवनवृत्त को पढ़ेंगे, तो देखेंगे कि किस आत्मविश्वास के साथ उन्होंने जीवन के आघातों को सहकर आत्म-साक्षात्कार के लक्ष्य को प्राप्त किया था। तब आप में भी आत्मविश्वास और लक्ष्यप्राप्ति का दृढ़ संकल्प एक बार फिर दृढ़मूल हो जायेगा।

साधकों के लिये श्रीमद्भगवद्गीता एक ऐसा ही उपयोगी तथा मार्गदर्शक ग्रंथ है। इसकी मुख्य विशेषता यह है कि यह किसी धर्म अथवा संप्रदाय विशेष में आस्था रखने का उपदेश नहीं देता। यह एक ऐसे व्यावहारिक दर्शन का उपदेश देता है जो प्रत्येक व्यक्ति के लिये उपयोगी है, भले ही उसकी धार्मिक मान्यतायें और विश्वास कुछ भी हों। गीता जीवन में आपकी स्थिति अथवा उत्तरदायित्वों में जरा भी हस्तक्षेप नहीं करती। वह न तो आपको अपने धर्म, श्रद्धा अथवा विश्वास को त्यागने की सलाह देती है और न ही अन्य धर्मों को ग्रहण करने के लिये प्रेरित करती है। वह आपके निर्वाचित आध्यात्मिक पथ को आलोकित कर उस पर दृढ़तापूर्वक आगे बढ़ने के लिये आपको प्रेरणा तथा उत्साह प्रदान करती है। उसका लक्ष्य आपको बचाना, काल्पनिक भय से रक्षा करना तथा आपकी चेतना का उत्तरोत्तर विकास करना है।

संसार में शान्ति और सन्तुलनपूर्वक रहना असंभव नहीं है। गीता हमें यही सिखाती है। गीता की पृष्ठभूमि कुरुक्षेत्र का युद्ध प्रांगण है। इस युद्ध का तात्पर्य कुरुक्षेत्र में कौरवों तथा पाण्डवों के बीच लड़े गये महाभारत युद्ध से ही नहीं, बल्कि हममें से प्रत्येक के भीतर निरन्तर हो रहे महाभारत से है। जब अर्जुन युद्ध के मैदान में असंख्य योद्धाओं को युद्ध की प्रतीक्षा में खड़ा देखता है, जब उनमें उसे अपने अनन्य निकट संबंधियों के चेहरे दिखलाई पड़ते हैं, तो वह बुरी तरह विचलित हो जाता है। उसे लगता है कि युद्ध नितांत व्यर्थ एवं मूर्खतापूर्ण कार्य है। वह लड़ने से साफ इन्कार कर देता है।

अर्जुन के अनिर्णय और विषाद को दूर करने के उद्देश्य से श्रीकृष्ण उसे गीता के उपदेश द्वारा एक उपयुक्त मनोवृत्ति अपनाने की सलाह देते हैं। वे अर्जुन से कहते हैं कि कर्म-विमुखता, कर्म के सिद्धान्त के विरुद्ध है। वे कहते हैं कि मनुष्य को कर्म के त्याग द्वारा नहीं, बल्कि कर्म करते हुए अपनी चेतना को विकसित करना चाहिए, क्योंकि मनुष्य के हर कार्य का सम्बन्ध उसकी चेतना के विकास से होता है।

अर्जुन कर्म से मुक्ति चाहता है, पर श्रीकृष्ण कहते हैं कि यह सम्भव नहीं है, क्योंकि कर्म न केवल शरीर बल्कि मन के द्वारा भी होते हैं। जब तक प्रकृति में प्रेरणा देने की शक्ति है, कर्मों को निर्मूल नहीं किया जा सकता। कर्म केवल तभी बन्धनकारक होते हैं जब उन्हें करते समय हमारे भीतर दु:ख-सुख, लाभ-हानि तथा राग-द्वेष की भावना रहती है। कर्म नहीं, बल्कि उसके फल की इच्छा बन्धनकारी होती है। जब तक आप इस शरीर में हैं, कर्म से छुटकारा नहीं मिल सकता, परन्तु यदि कर्म के पीछे फलासक्ति न हो तो वह मोक्ष और ज्ञान का माध्यम हो सकता है।

कर्म तीन प्रकार के होते हैं—उचित, अनुचित तथा अकर्म। कर्म न करने से आलस्य और निष्क्रियता आती है। अनुचित कर्म का आधार वासना, अज्ञान और आंतरिक संकेतों को न समझ पाना होता है। उचित या सही कर्म वह होता है जो हमारे भीतर नियंत्रण और सामंजस्य लाता है। अन्य शब्दों में कह सकते हैं कि सही कर्म उच्च आत्मज्ञान में बदल जाता है। जब आप कर्मफल का परित्याग कर देते हैं, तब वह आत्म-साक्षात्कार का निमित्त बनता है। वह बन्धनकारक नहीं होता। गीता कर्म के बन्धन से मुक्ति का उपदेश देती है, कर्म त्यागने का नहीं।

यही कर्मयोग का दर्शन है जो गीता का प्रमुख उपदेश है। पूर्ण सजगता तथा एकाग्रतापूर्वक अपने निर्धारित कार्य करते रहिये। जब आप अपने काम में पूरी तरह दत्तचित रहते हैं तो आपका निम्न अहंकार सिर नहीं उठा पाता। अनेक अवसरों पर आपने इसका अनुभव किया होगा।

श्रीकृष्ण स्वयं एक गृहस्थ होने के साथ-साथ महान् कर्मयोगी भी थे। भले ही वे ईश्वरावतार रहे हों, पर हम उन्हें एक पूर्ण मानव के रूप में देखते हैं। वैराग्य उनके जीवन का महान् आदर्श रहा है। वे काम के लिये काम करते थे। आप भी यदि ऐसा करें तो कार्य आपके लिये आनन्द का स्रोत बनेगा, परन्तु उसके फल की आशा कर उसके बन्धन में न बंधिये। युद्धक्षेत्र में श्रीकृष्ण अर्जुन को उत्साहित करते हुए कहते हैं—'वह जो अत्यन्त क्रियाशील रहते हुए भी अपने भीतर शान्ति और स्थिरता का अनुभव करता है, सचमुच महान् योगी और मूर्धन्य विद्वान् होता है।'

भले ही आप बाजार के बीच खड़े हों या बड़ी विपत्ति में फँसे हों, आपके भीतर वही सन्तुलन कायम रहेगा जो गहरे ध्यान की अवस्था में प्राप्त होता है। यदि आप ऐसा कर पायें तो समझिये कि आपने जीवन के रहस्य को समझ लिया है और स्वयं अपने स्वामी बन गये हैं, यदि नहीं तो अवश्य आप में कहीं कुछ कमी रह गयी है।

गीता वह महान् ग्रंथ है जिसमें मानवता के उत्थान के लिये आध्यात्मिक और व्यावहारिक जीवन का सुन्दर समन्वय किया गया है। गीता में वह महान् ज्ञान है जो आध्यात्मिक जीवन में सबका मार्गदर्शन कर सकता है। यही एकमात्र ग्रंथ है जिसमें उच्च चेतना प्राप्त करने के मार्गों के बीच किसी प्रकार का विरोध नहीं है। यह आपके समक्ष केवल आपका लक्ष्य रखती है तथा उसे प्राप्त करने का मार्ग दिखाती है।

सत्यम् वाणी

श्रद्धा और विश्वास

भगवान हर एक के लिये एक पहेली है, एक समस्या है, क्योंकि किसी ने भगवान को देखा नहीं है। हम ने भगवान के विषय में ग्रन्थों में पढ़ा है, लेकिन देखा नहीं है। इसलिये भगवान के बारे में, उनकी महानता के बारे में हमारा ज्ञान बौद्धिक है। हम लोग अपने को उनसे जोड़ नहीं सकते हैं, विश्वास भी नहीं करते हैं। ज्ञान के साथ विश्वास भी होना चाहिये। उदाहरण के लिये, तुम्हारी माँ है, तुमने कभी यह प्रश्न नहीं किया कि वह तुम्हारी माँ है या नहीं। किसी ने तुम्हें बताया भी नहीं कि वह तुम्हारी माँ है। बस तुम मानते हो कि वह तुम्हारी माँ है। इसे विश्वास कहते हैं। तुम्हारे पिता के बारे में भी किसी ने कोई प्रमाण प्रस्तुत नहीं किया, फिर भी तुमने मान लिया कि वे तुम्हारे पिता हैं। तुमने कोई सवाल नहीं किया, बस, स्वीकार कर लिया। इसे विश्वास कहते हैं। जब तुम किसी बात को स्वीकार कर लेते हो और तर्क-वितर्क नहीं करते तब वह विश्वास बन जाती है।

शिव और पार्वती श्रद्धा और विश्वास के प्रतिरूप हैं। तात्पर्य यह कि श्रद्धा और विश्वास हमारी प्रकृति के अंग हैं, हमारे व्यक्तित्व के अंश हैं। जैसे तुम्हारे भीतर प्राणशक्ति है वैसे ही श्रद्धा और विश्वास भी तुम्हारे अन्दर है। यदि पृथ्वी पर तुम्हारा जन्म श्रद्धा और विश्वास के साथ हुआ है तो तुम्हें मुझसे यह सब नहीं सीखना है। किसी से भी जानने की जरूरत नहीं है। ग्रन्थों से विश्वास की शिक्षा नहीं मिल सकती। कोई भी तुम्हें श्रद्धा और विश्वास का घूँट नहीं पिला सकता। यह प्रकृति-प्रदत्त है, जन्मजात है। तुम अपनी आँखों से देख सकते हो, कानों से सुन सकते हो, मुख से बोल सकते हो—ये समस्त शक्तियाँ प्रकृति-प्रदत्त हैं। उसी प्रकार श्रद्धा और विश्वास भी प्राकृतिक देन है। कठिनाई यह है कि तुम लोगों ने बहुत सारे ग्रन्थों को पढ़ लिया है, बहुत-सी बातें इधर-उधर से सुन ली हैं। इसलिये सत्संगों से और ग्रन्थों के अध्ययन से तुम अपने आध्यात्मिक विश्वास की पुष्टि करते हो। लेकिन एक समय आयेगा जब तुम्हें इनकी मदद के बिना ही अपना रास्ता तय करना होगा। तर्क और बुद्धि से कुछ दूर तक तुम्हें मदद मिलेगी, लेकिन उसके बाद तुम्हें इनके पार जाना होगा।

जब तुम मन का दमन करते हो तो वह समस्या बन जाता है। मन का दमन मत करो। मन को समेटना भी कठिन है। मन का स्वभाव है चंचल होना। हर एक आदमी का मन चंचल है। बुद्धि भी एक बाधा है। हम लोगों ने इतना पढ़-लिख लिया है कि हर चीज के बारे में मन में एक छवि, एक धारणा बन गयी है। यही समस्या मेरे साथ भी थी। पहले मैं भगवद्-विषय पर महीनों व्याख्यान दे सकता

था। मैं ईसाई धर्म, इस्लाम धर्म, सूफी मत, समस्त हिन्दू मतों पर व्याख्यान देता था। मुंगेर में धर्म और दर्शन पर जितने ग्रन्थ तुम देखते हो सब मेरी निजी पुस्तकें हैं। मैंने उन सारी पुस्तकों को खरीदकर इकट्ठा किया था। मैं अपने सारे पैसे किताबों पर खर्च करता था। मैं ट्रेन में सफर करते समय किताबें ही पढ़ते रहता था। यही मेरी हॉबी थी।

आत्म-शुद्धि

एक समय आया जब ज्ञान मेरे जीवन में बड़ी बाधा बन गया। अब मैं किताबें नहीं पढ़ता, बिल्कुल नहीं। मैंने पुस्तकों का परित्याग कर दिया है। मैं लोगों को ज्ञान देता हूँ, पर मेरे लिये उसका कोई उपयोग नहीं है। लेकिन मैं लोगों को बताता रहता हूँ क्योंकि यह मेरा अनुभव है। अनुभव तब आता है जब तुम हर व्यक्ति के साथ एकत्व का भाव रखो। आध्यात्मिक जीवन सैद्धान्तिक जीवन नहीं है। ईसा मसीह क्या कहते हैं, श्रीकृष्ण क्या कहते हैं? वे एक ही बात कहते हैं, अपने को शुद्ध करो। पर अपना शुद्धिकरण कैसे होगा?

तुम सिर्फ अपने पति, पत्नी और बच्चों के कल्याण की बात सोचते हो। दूसरों की फिक्र तुमको है ही नहीं। अपने पति, पत्नी और बच्चों की खुशी में ही तुम्हारी खुशी है। लेकिन मेरी खुशी तुम्हारी खुशी नहीं है। तुम्हारे पड़ोसी की खुशी में तुम्हारी खुशी नहीं है। तुम्हारे पड़ोसी की समस्या तुम्हारी समस्या नहीं है। तब तुम

कैसे दावा कर सकते हो कि तुमने अपनी आत्म-शुद्धि कर ली? आध्यात्मिक जीवन का पहला पाठ ध्यान नहीं, सेवा है। ध्यान तो आखिरी पाठ है। यह स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम है। हाँ, मैं पचास साल से ध्यान कर रहा हूँ, परिणाम शून्य था। अब पचास साल बाद ध्यान कर रहा हूँ तो इसका परिणाम भिन्न है। आँखें बन्द कर लेने का क्या लाभ? मेरी बात समझ रहे हो न? सेवा आध्यात्मिक जीवन का पहला पड़ाव है। अगर तुम भगवान के करीब आना चाहते हो तो सेवा में लग जाओ। सेवा का मतलब मानव जाति की सेवा। एक की सेवा, दो की सेवा, तीन की सेवा, कुष्ठ रोगी की सेवा, अनाथ की सेवा, अन्धे की सेवा, निराश्रित विधवा की सेवा–यही आध्यात्मिक जीवन का पहला पाठ है। ईसा मसीह ने सेवा की बात कही थी, गीता ने भी सेवा की बात कही है। गीता में 18 अध्याय हैं। ज्ञानयोग बाद में आता है, संन्यास योग बाद में आता है, कर्मयोग पहले आता है। हम लोग उसे कर्मयोग कहते हैं, लेकिन यह है सेवा योग। नि:स्वार्थ सेवा। जब तुम पत्नी, पति या बच्चों की सेवा करते हो तो वह नि:स्वार्थ सेवा नहीं, वह स्वार्थपरक सेवा है। उसमें तुम्हारा स्वार्थ निहित है। स्वार्थ मतलब अपने लिये। जब तुम दूसरों की सेवा करते हो तो वह नि:स्वार्थ सेवा कहलाती है। हम लोग उसको परमार्थ कहते हैं, मतलब दूसरों के लिये। जो तुम दूसरों के लिये करते हो वह कर्मयोग कहलाता है, जो दूसरों के लिये नहीं करते वह कर्म है। यह पहला पाठ है।

दूसरा पाठ है प्रेम। हर एक से प्रेम करो। लड़की या लड़के के साथ प्रेम, जिसके बारे में आजकल बहुत-से सस्ते गाने हैं, वह प्रेम नहीं, वासना है। प्रेम का मतलब हुआ किसी को अपना समझना। वह तुम्हारे किसी काम का नहीं हो सकता है, वह बुरा आदमी हो सकता है, फिर भी उससे प्रेम है। प्रेम में घृणा के लिये कोई जगह नहीं होती। जहाँ घृणा है वहाँ प्रेम कहाँ?

तीसरा पाठ, देने की आदत डालो। सिर्फ लेने की नहीं, देने की भी आदत डालो। हाँ, हर आदमी अमीर नहीं है, लेकिन कुछ तो है जो तुम दे सकते हो। हर व्यक्ति के पास दूसरों को देने की क्षमता है। देने वाली चीज कुछ भी हो सकती है। पाने वाला पात्र कोई भी हो सकता है।

उसके बाद आता है शुद्धिकरण। मन के शुद्धिकरण के बाद ध्यान करो। ध्यान बी.ए. कोर्स है और आत्मानुभूति एम.ए. कोर्स। सेवा के.जी. है। यदि किसी छोटे बच्चे को तुम सीधे एम.ए. कोर्स में डाल दोगे तो वह कुछ नहीं समझेगा। किसी बच्चे को तुम उच्च गणित पढ़ाने लगोगे तो वह क्या समझेगा? पहले बच्चे को छोटी-छोटी चीजें बतायी जाती हैं। इसी तरह आध्यात्मिक जीवन छोटी-छोटी चीजों से प्रारम्भ होता है।

अन्त में आता है आत्मभाव। वेदान्त में आत्मभाव की चर्चा है। जो अपने को सबमें देखता है और सबको अपने में देखता है यही आत्मभाव है। आत्मभाव का

मतलब हुआ कि अपने विषय में जैसी तुम्हारी वृत्ति है वैसी ही वृत्ति दूसरों के विषय में भी हो। यदि तुम्हारे पैर में काँटा चुभने पर तुमको पीड़ा होती है, लेकिन मेरे पैर में काँटा चुभने पर तुमको दर्द नहीं हो तो यह आत्मभाव नहीं हुआ। तुमको वह अनुभव नहीं होता है।

महाराष्ट्र के शिर्डी कस्बे में एक महान् सन्त हुये थे, साईं बाबा। उनके बारे में कई कहानियाँ प्रचलित हैं। एक कहानी है कि जब उनके भक्तों के घर में आग लग जाती थी तो उनके शरीर में जलन होने लगती थी। वे कहने लगते थे, 'मेरा शरीर जल रहा है', और लोग उनके शरीर पर जल के छींटे देने लगते थे। दूसरों की पीड़ा उनका अनुभव कैसे बन जाती थी?

अपने जीवन का एक छोटा-सा अनुभव बताता हूँ। एक बार हरिद्वार में कुम्भ मेला लगा। यह घटना पचास साल पहले की है। कुम्भ मेले के बाद कई हजार लोग ऋषिकेश आ जाते हैं। एक दिन शाम के समय मैं लक्ष्मणझूला की ओर जा रहा था। रास्ते में मैंने सड़क के किनारे एक बोरी पड़ी देखी। बोरी भरी हुई लगी। मैं उसे देखकर आगे बढ़ गया। जब मैं आश्रम लौट कर आया तो पता चला कि स्वामी चिदानन्द जी उस बोरी को उठा लाये थे। उस बोरी से एक वृद्ध कुष्ठ रोगी निकला। स्वामी शिवानन्द जी ने उसे कुछ पैसे दिये और एक कुटी बनवा कर उसकी चिकित्सा का प्रबन्ध किया। उसकी सेवा के लिये कुछ संन्यासियों को नियुक्त किया जो उसे स्नान कराते, उसकी दाढ़ी बनाते और अन्य कार्य करते। मुझे भी उसकी सेवा में लगाया गया था। मैंने उसकी जो सेवा की वह सेवा नहीं थी, वह मेरा कर्तव्य था जो गुरु ने मुझे सौंपा था। मेरे भीतर सेवा का भाव नहीं था। उसकी पीड़ा मेरी पीड़ा नहीं थी। मुझे वह काम सौंपा गया था इसलिये मैं कर रहा था। मेरी बात समझ रहे हो न? मैं तुम्हें भेद बता रहा हूँ। कुछ करना ही काफी नहीं है, भाव भी जरूरी है। तुम भले ही कुछ न भी कर सको, तुम्हारे पास पैसे न हों मदद करने के लिए, यह महत्त्वपूर्ण नहीं है। महत्त्व भाव का है। यह बाहरी चीज नहीं, आन्तरिक भाव है। मेरे भीतर कोई भाव नहीं था। मैं सिर्फ कर्म कर रहा था। प्रतिदिन सबेरे जाकर मैं उसकी दाढ़ी बना दिया करता था।

मैंने तुम्हें सिर्फ एक उदाहरण दिया, बात को समझाने के लिये। वह एक लम्बी कहानी है। बाद में स्वामी शिवानन्द जी ने निर्णय लिया कि जो कुष्ठ रोगी सड़कों पर भीख माँगते हैं उनके आवास की व्यवस्था होनी चाहिये। इसके लिए सरकार ने भूमि उपलब्ध करा दी। किसी ने बांस, फूस आदि का प्रबन्ध किया और मेरे ऊपर कॉलोनी निर्माण का भार सौंपा गया। मैंने निर्माण कार्य पूरा किया। उस कॉलोनी में सौ परिवार रहते थे। हर दिन शाम को वहाँ जाकर उन्हें रामायण-पाठ कराता था, पर मेरे भीतर भाव बिल्कुल नहीं था। जिसे तुम प्रेम करते हो, वह अगर बीमार हो जाए तो क्या होता है? उसे कोई तकलीफ हो जाये तो क्या तुम्हें नींद आती है? तुम

गंगा दर्शन, मुंगेर

पादुका दर्शन, मुंगेर

अन्तरराष्ट्रीय कार्यक्रम

सो नहीं सकते, तुम बेचैन हो जाते हो। यह आत्मभाव है। सच्चा आत्मभाव तब आता है जब तुम ऐसे व्यक्ति से जुड़ते हो जिसका तुम्हारा लिये कोई उपयोग नहीं है, जो तुम्हारे सम्प्रदाय का नहीं है, जो तुम्हारे परिवार का नहीं है, वह किसी काम का नहीं है, फिर भी उसके साथ तुम आत्मभाव दिखाते हो। जबकि मैं यही सोचता था कि उस कुष्ठ रोगी की सेवा में क्या रखा है, वह तो मरणासन्न है।

गुरु प्राप्त करने के बाद आध्यात्मिक जीवन का प्रारम्भ सेवा से करो। शरीर के लिये योग ठीक है, प्राणायाम भी ठीक है। थोड़ा जप और थोड़ा ध्यान भी आवश्यक है। थोड़ा स्वाध्याय, थोड़ा सत्संग, कीर्तन और भजन भी ठीक है। लेकिन वास्तव में इनसे कुछ होने वाला नहीं है। इससे आध्यात्मिक जीवन का रोड-रोलर एक इंच भी आगे नहीं बढ़ेगा। पचास सालों तक मेरा आध्यात्मिक जीवन एक ही बिन्दु पर टिका रहा, आगे नहीं बढ़ा। भले ही मैंने कठिन-से-कठिन साधना की, गंगोत्री में प्राणायाम की प्रचण्ड साधना की, तान्त्रिक साधनायें भी कीं, लेकिन मेरा रोड-रोलर वहीं का वहीं जमा रहा। जब मेरे अंदर थोड़ी-सी भावना जगी तब मेरी गाड़ी आगे बढ़ने लगी।

आध्यात्मिक जीवन मात्र बौद्धिक जीवन नहीं, यह भावनात्मक जीवन है। जैसी भावना तुम्हारे मन में अपने बेटे-बेटियों के लिये होती है, जैसी भावना अपनी पत्नी या प्रेमिका के लिये होती है, जैसी भावना सोने-चाँदी, बैंक-बैलेन्स और सांसारिक

भोग-विलास के लिये होती है, वैसी भावना जब तुम्हारे भीतर दूसरों के लिये पैदा होगी तब आध्यात्मिक जीवन आरम्भ होगा। रामचरितमानस में तुलसीदास जी ने कहा भी है–

कामिहि नारी पिआरी जिमि लोभिहि प्रिय जिमि दाम।
तिमि रघुनाथ निरन्तर प्रिय लागहु मोहि राम॥

जैसे कामी को नारी अच्छी लगती है, लोभी को पैसे अच्छे लगते हैं, ठीक वैसे ही राम मुझे प्यारे लगें। सांसारिक वासनाओं की भावना राम के प्रति बदल जाती है।

देखा जाए तो आध्यात्मिक जीवन बड़ा कठिन है क्योंकि तुम्हें पता ही नहीं है कि कहाँ से शुरू करें। आध्यात्मिक जीवन उलझा हुआ धागा है, कहाँ से शुरू करें, समझ में नहीं आता है। तुम्हें हमेशा अपने दिल पर भरोसा रखना चाहिए, दिमाग पर नहीं। मनुष्य की भावना उसकी स्त्री की तरह है और बुद्धि रखैल की तरह।

हम लोग सत्यनारायण जी की कथा-व्रत करते हैं। सत्यनारायण कथा के अनुसार जिन्होंने सत्यनारायण की कथा की, उनको यह-यह फल मिला। उसी प्रकार बृहस्पति की कथा में भी कहते हैं। तो हम जो कथा कर रहे हैं उसके अन्दर असल में छिपी हुई और कथा है क्या?

हर इन्सान को अपनी खोपड़ी पर बहुत यकीन है, पर खोपड़ी हमेशा काम नहीं करती। हर इन्सान के अन्दर एक विश्वास है, एक श्रद्धा है और उस श्रद्धा में चमत्कार की शक्ति है। चमत्कार शब्द जो तुमने सुना है वह श्रद्धा को जगाने के लिये है। जो कथा तुम बोल रहे हो वह उसी के लिये आदमी के दिमाग में डाली जाती है, जब आदमी छोटे बच्चे की तरह भोला होता है। अभी तुम्हारा विश्वास भोला नहीं है। तुम एक बड़ी उम्र वाली स्त्री की तरह सोचती हो, एक विवाहिता स्त्री की तरह सोचती हो, एक पढ़ी-लिखी लड़की की तरह सोचती हो, अपने ऊपर एक घमण्ड होता है। तुमको ही नहीं, यह सबको होता है। यह अध्यात्म मार्ग में बाधक है। अपने को कुछ समझना अहंकार है। मैं बड़े घर की बहू-बेटी हूँ, मेरे पास बहुत पैसे हैं, मैं बहुत सुन्दर हूँ, मेरे बच्चे बहुत अच्छे हैं, मेरा पति बहुत अच्छा है–ये जितनी भी चीजें हैं सब अभिमान है। अपने को कुछ मान लेना। इसका मतलब है कि तुम भोली नहीं हो।

कई बड़े लोग हैं जिनको देवता के सामने झुकने में शर्म आती है। हमारे गुरुजी तो वेदान्ती थे, बहुत पढ़े-लिखे थे और साधु-सन्त उनको बहुत मानते थे। हम जब उनकी कुटिया में जाते थे तो रोज उन्हें कृष्ण भगवान की पूजा करते देखते थे। वे कृष्ण भगवान की मूर्ति के सामने दण्डवत् नमस्कार करते थे। मैं वेदान्त पढ़ा हुआ आदमी था, मेरी समझ में नहीं आता था कि वे मूर्ति के सामने क्यों झुकते हैं।

उन्होंने मेरे मन की बात पढ़ ली। वे बोले, 'मूर्ति के आगे झुकना उतना महत्त्वपूर्ण नहीं जितना महत्त्वपूर्ण है अभिमान को दूसरे के आगे झुकाना। संन्यासी में, साधक में अभिमान नहीं होना चाहिये।' इस अभिमान को मिटाने के लिये हमारे ऋषि-मुनियों ने कहानियाँ गढ़ी हैं और उन कहानियों से हमारे मन में विश्वास जागता है। कभी-कभी वह विश्वास बहुत दृढ़ हो जाता है तो चमत्कार घटित होता है। कभी-कभी यह विश्वास कमजोर रहता है तब वह नहीं होता। श्रद्धा और विश्वास में आधे-अधूरे से काम नहीं चलेगा। या तो पक्का होना है या बिल्कुल नहीं होना है। ऐसा नहीं कि विश्वास है जो कभी-कभी हिल जाता है। तुम रामचरितमानस पढ़ लो। तुलसीदास जी ने सबसे पहले यही लिखा है–

भवानीशंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ।
याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धा:स्वान्तस्थमीश्वरम्॥

'मैं श्रद्धा-विश्वास के प्रतीक महादेव और पार्वती की वन्दना करता हूँ जिन दोनों के बिना सिद्ध महात्मा भी अपने अन्दर में छुपे हुए ईश्वर को नहीं देख सकते।' यहाँ साधकों की नहीं, सिद्ध पुरुषों की बात कही है। श्रद्धा-विश्वास के बिना सिद्ध पुरुष भी अपने अन्दर छुपे हुये ईश्वर को नहीं देख सकते। श्रद्धा-विश्वास के बिना न माँ तुम्हारी माँ है, न बाप तुम्हारा बाप है। श्रद्धा-विश्वास से ही जीवन चलता है, जबकि बुद्धि, जिसको मैंने रखैल का नाम दिया है, वह हमेशा फँसाती रहती है।

पाश्चात्य दिशा से यह जो सभ्यता आयी है वह बुद्धि-प्रधान है। जो लोग पाश्चात्य विचारधारा में फँसे हुये हैं उनको ज्ञान तो बहुत हो जायेगा, जानकारियाँ

भी बहुत मिल जायेंगी, वे तुमको सब समझा भर देंगे, तुम्हारे लिये मोटी किताबें भी लिख देंगे, लेकिन अनुभव-शून्य होंगे। क्यों? इसलिए कि बुद्धि तो हमेशा रखैल की तरह व्यवहार करती है। वह आदमी के मन में उसकी स्त्री के प्रति कुछ-न-कुछ गलत चीजें डालती रहती हैं।

यही कारण है कि सन्त-महात्मा और ऋषि-मुनि इसी तरफ पैदा हुये हैं, पश्चिम में एक भी नहीं हुआ। ईसा मसीह यूरोप के थोड़े ही थे। भगवान बुद्ध या महावीर चीनी थोड़े ही थे। इस भारत भूमि में महात्माओं ने सत्यनारायण की कथा, हनुमान की कथा, गायत्री की कथा और अन्य पौराणिक कथा-कहानियाँ सुनाकर लोगों के विश्वास को नया जीवन दिया है, जैसे इन्जेक्शन देकर किसी को नव-जीवन प्रदान किया जाता है।

हमारे देश में इतिहास को इतिहास की तरह नहीं देखा जाता है, क्योंकि इतिहास को इतिहास के रूप में देखने से वही होता है जो आज इज़रायल में हो रहा है। अरे! यहाँ भी कितनी लड़ाइयाँ हुई, कितने लड़े-मरे, किसको याद है? कौन परवाह करता है? वहाँ फिलिस्तीनियों और यहूदियों के बीच कितनी मारा-मारी होती है? उनको इतिहास याद है क्योंकि इतिहास को वे इतिहास की तरह पढ़ते हैं। हम लोग इतिहास को पुराणों की तरह याद करते हैं। इति-हास का मतलब 'ऐसा हुआ' होता है। हमलोगों ने उसको पुराण का रूप दे दिया। पुराण का मतलब क्या होता है? 'पुरा' माने पहले, किसी जमाने में और 'ण' माने जानकारी। किसी जमाने की जानकारी को पुराण कहते हैं। पुराण का वही मतलब होता है जो इतिहास का होता है, मगर उसी इतिहास को पुराण का रूप देकर कहानियाँ डाल दीं। उन कहानियों का तुम्हारे मन पर जो प्रभाव होगा वह आध्यात्मिक होगा। वह तुम्हारे श्रद्धा-विश्वास को जगायेगा। अगर इतिहास पढ़ोगे तो तुम्हारे मन में मुसलमानों के प्रति, वैष्णवों के प्रति, जैनों के प्रति, बौद्धों के प्रति, ब्राह्मणों के प्रति, ठाकुरों के प्रति द्वेष भाव जगेगा। इसलिए इतिहास को हमने पुराणों में बदला है। अब ऋषि वशिष्ठ और विश्वामित्र का झगड़ा हो गया। ठीक है, हुआ। उसे पुराणों में कहानी के रूप में बताया। विश्वामित्र और मेनका के बीच प्रेम हो गया। उसे कहानी में नया रूप दे दिया।

सारी पाश्चात्य संस्कृति यूनानी चिन्तन का परिणाम है। इसलिए पाश्चात्य संस्कृति में हर चीज बौद्धिक है। इस वजह से वहाँ कोई पैगम्बर या महात्मा नहीं हुआ। ईसा मसीह को उन्हें आयात करना पड़ा। यूरोप के लिये ईसा मसीह इम्पोर्टेड माल थे। बुद्धि से बुद्धत्व नहीं पैदा हो सकता। बुद्धि से धर्म, विज्ञान, समाज-शास्त्र, नीति-शास्त्र, न्याय-शास्त्र और गणित-शास्त्र की उत्पत्ति हो सकती है, अपरा विद्या का जन्म हो सकता है, किन्तु परा विद्या की उत्पत्ति नहीं हो सकती। यही कारण है कि सभी सन्त और पैगम्बर, चाहे मूसा हों या ईसा मसीह या बुद्ध या मुहम्मद, सभी भूमध्य सागर के पूर्व में पैदा हुये। इस क्षेत्र के देश आध्यात्मिक अनुभवों से समृद्ध रहे

हैं, भले ही उनका धर्म कोई भी रहा हो। धर्म तो मात्र एक आवरण है, असली चीज है श्रद्धा-विश्वास की भावना। तुमने उसे नहीं देखा है, परन्तु किसी ने उसे देखा है। हर आदमी एटम बम नहीं देख सकता, लेकिन सबको एटम बम पर विश्वास करना पड़ता है। हर आदमी हर चीज की प्रत्यक्ष जानकारी नहीं प्राप्त कर सकता, लेकिन विश्वास करना पड़ता है क्योंकि वैज्ञानिक कहते हैं। इसी तरह हमें संत-महात्माओं की बातों पर भी विश्वास करना पड़ता है। कथा-कहानियों का प्रयोजन मनुष्य के अन्दर श्रद्धा और विश्वास को जगाना है। श्रद्धा-विश्वास इतनी सुन्दर चीज है कि जाग गई तो कमाल कर देती है। आनन्द, आनन्द और आनन्द हो जाता है।

इसलिये आध्यात्मिक मार्ग पर चलते हुए तुम्हारा मजबूरी का जो जीवन है, उसका अच्छे से पालन करो। मजबूरी का मतलब है बाल-बच्चे, घर-परिवार, मियाँ-बीबी, सास-ससुर, जेठानी-देवरानी, दुकान-व्यापार, नौकरी-चाकरी। सबको देखना है, सबको चलाना है। यह तो करना ही पड़ेगा। मगर इसको बुद्धि से करो। यहाँ पर अपनी रखैल को लगा दो। मन लगाकर खूब पैसे कमाओ, कोई फर्क नहीं पड़ता। मगर याद रखो जब भगवान के रास्ते में जाते हो उस वक्त केवल छोटे बच्चे का दिल लेकर जाओ। वहाँ पर पण्डित और आचार्य बनकर मत जाओ। भगवान के रास्ते में सब लोग बच्चे होते हैं। इसलिये उस रास्ते पर बच्चों की तरह भोला-भाला बनो।

जब हनुमान जी को राम जी का पहला दर्शन ऋष्यमूक पर्वत के नीचे हुआ तो उन्होंने राम जी को नहीं पहचाना क्योंकि वे पता करने आये थे कि वे कौन हैं? अपनी खोपड़ी लगा रहे थे ब्राह्मण का वेश बनाकर। राजा सुग्रीव ने उन्हें यह कहकर भेजा था कि पता नहीं ये दोनों छोकरे कौन हैं, सम्भव है मुझे मारने के लिये बाली ने इन्हें भेजा हो। जब हनुमान जी ने पूछा, 'तुम सुन्दर नर कौन हो? तुम नंगे पैर जंगल में चल रहे हो। देखने से तो लगता है तुम किसी सुन्दर राजघराने से हो?' तब श्रीराम ने उत्तर दिया, 'हम कौशल्या-दशरथ के पुत्र हैं। हमारी स्त्री खो गई है और हम उसे खोजने के लिये आये हैं।' हनुमान जी को तुरन्त ज्ञान हो गया, 'अरे, ये तो वही हैं।' मतलब जब तक बुद्धि खोजती रहती है तब तक भगवान मिलते नहीं हैं। तुम भगवान की बात छोड़ो, पत्नी या पति के साथ सम्बन्ध को देखो। बुद्धि के द्वारा कुछ निर्णय नहीं ले सकते हो। दिल से ही तुम एक-दूसरे को समझ सकते हो। बस वही सम्बन्ध भगवान के साथ होता है।

सती को वन में राम जी के प्रति सन्देह हो गया। वे दिमाग लगाने लगीं कि अगर वे भगवान हैं तो औरत के पीछे क्यों भागते हैं? सीता चली गयी तो चली गयी। जब तुम किसी फिल्म में काम करते हो और फिल्म में तुम्हारे पति को कोई मार देता है तो तुम रोते हो, दु:ख प्रकट करते हो, मगर अन्दर में दु:ख तो नहीं होता है न? सती के मन में यही बात आई कि जब नाटक है तो रोते क्यों हैं? राम जी को इतना दु:ख क्यों हो रहा है सीता जी के विरह का? वे तो भगवान हैं। उनको तो मालूम है सीता जी को कौन और कहाँ ले गया। उनके मन में सन्देह उत्पन्न हो गया था, क्योंकि बुद्धि का आश्रय लेकर ये प्रश्न पूछ रही थीं। मजे की बात यह कि शिव जी ने उन्हें साफ-साफ बता दिया था कि श्रीराम मेरे इष्टदेव हैं। इसके आगे की कहानी तो तुम्हें मालूम है। जब सती ने पुन: पार्वती के रूप में जन्म लिया और शिव जी के साथ उनका विवाह हुआ तो पहली बात उन्होंने शिव जी से यही कही कि भगवन्, पूर्व जन्म में ऐसी घटना हुई थी जब मैंने आपके कथन पर सन्देह किया था। अब मेरा मन साफ है, उसमें किसी प्रकार का सन्देह नहीं है। मेरा पक्का विश्वास है कि श्रीराम अजर-अमर हैं, अन्तर्यामी हैं। अब मुझे कोई सन्देह नहीं है, आप मुझे

उनकी कहानी सुनाइये। तब भगवान शिव एक ही वाक्य कहते हैं– *पूँछेहु रघुपति कथा प्रसंगा, सकल लोक जग पावनि गंगा।* 'पार्वती, तुमने रघुपति की कथा पूछी है जो सकल संसार को पवित्र करने वाली गंगा की तरह काम करती है। अब तुम्हें वह प्रसंग सुनाता हूँ क्योंकि अब तुम संशयरहित हो गयी हो। राम के व्यक्तित्व के बारे में तुम्हारे मन में कोई सन्देह नहीं है। पूर्व जन्म में तुमको सन्देह था तो तुम्हें भी नुकसान हुआ और मुझे भी। तुम सती हो गयी, मैं अकेला हो गया। अब ऐसा नहीं है।' इसीलिये शिव और पार्वती को विश्वास और श्रद्धा का प्रतीक माना जाता है।

उत्तर रामायण में कहा गया है कि कलियुग में केवल राम-नाम से ही उद्धार होगा। पर साथ-साथ यह भी कहा गया है कि जिसकी श्रद्धा न हो उसे नहीं सुनाना चाहिये।

वह तो सुनेगा ही नहीं। अब यहाँ सब लोगों को मजा आ रहा है तो बैठे हैं, नहीं तो उठकर चले जायेंगे। सोचेंगे, पता नहीं स्वामीजी क्या बोल रहे हैं। दुष्ट को तुम बदल सकते हो, मूर्ख को नहीं। 'मूरुख हृदयँ न चेत जौं गुर मिलहिं बिरंचि सम'–ब्रह्मा भी अगर गुरु बनकर आ जाएँ तो मूर्ख व्यक्ति को ख्याल नहीं आता है। 'फूलइ फरई न बेत जदपि सुधा बरषहिं जलद'–बेंत के पेड़ में कितना भी पानी डालो, वह न फूलेगा, न फलेगा। मगर दुष्ट के बारे में कहा है– 'सठ सुधरहिं सतसंगति पाई'–दुष्ट सत्संग में जाकर सुधर जाता है, जैसे लोहा पारस का संग पाकर सोना बन जाता है।

जो तुम कह रहे हो यह हमारे यहाँ प्रत्येक शास्त्र में लिखा है, केवल रामायण में ही नहीं। वेदों में, उपनिषदों में, सभी जगह लिखा हुआ है। इसको लिखने का मतलब है कि जिसको पसन्द न हो उसको नहीं सुनाना। जो इसको न माने उसको जबर्दस्ती न पढ़ाना। यह हमारे धर्म की, हमारी संस्कृति की विशेषता है। जो हमारे धर्म को नहीं मानता, जो हमारे विचारों को नहीं मानता, जो हमारे ख्यालों को नहीं मानता उसको सुनाओ ही नहीं। बेकार में क्यों मत परिवर्तन करोगे, हम किसी के धर्म परिवर्तन के पक्ष में तो हैं नहीं। इसी को बताने के लिये सभी शास्त्रों में लिखा है कि जो इसको स्वीकार न करे उस पर नहीं थोपना। जब तुमको पसन्द नहीं है तो क्यों बोलेंगे। हर ग्रन्थ लिखने वाले महापुरुष ने यह ख्याल रखा। जैसे कोई किसी को ईसाई बनाने में लगा है, किसी को मुसलमान बनाने में लगा है, हम लोग वैसा नहीं करते। जिसको पसन्द हो सुने, जिसको पसन्द न हो नहीं सुने। उसका और कोई मतलब नहीं है।

कर्मों का प्रबन्धन और दिशान्तरण

अपने कर्म को कोई क्यों बदले? कर्म न तो भारी होता है, न ही कष्टदायी। सब तुम्हारे दृष्टिकोण पर निर्भर करता है। एक सन्त थे जो बहुत कामुक थे, औरतों के प्रति उनकी गहरी आसक्ति थी। वे काम-वासना से मुक्त होना चाहते थे, तो उन्होंने

क्या किया? अपनी आँखें फोड़ डालीं! इससे उनकी समस्या का निदान नहीं हुआ। मैं एक कर्म, काम की बात कर रहा हूँ, पर ऐसे अनेक कर्म होते हैं जैसे क्रोध, लोभ आदि। काम-वासना शायद सबसे दुष्कर कर्म है। बहुत कम लोग काम पर विजय प्राप्त कर पाते हैं। वे अन्धे हो गये, लेकिन उनके मन से काम नहीं निकला।

एक दिन एक महान् सन्त उनकी गली से गुजरे। वे एक बड़े सम्प्रदाय के संस्थापक थे। भगवान उनके लिये कोई अमूर्त सिद्धान्त नहीं, बल्कि जीवन्त सत्य था। उनका भगवान किसी काल्पनिक स्वर्ग में नहीं, मंदिर-मंदिर, घर-घर में रहता था। उनका भगवान मनुष्य की तरह रहता था, सोता था, खाता-पीता था, हँसता-बोलता था और बीमार भी पड़ता था। उनका नाम था वल्लभाचार्य। जगन्नाथपुरी का मन्दिर उसी सम्प्रदाय का है। जगन्नाथपुरी में बलराम, सुभद्रा और कृष्ण हर साल पिकनिक पर जाते हैं, जैसे हम लोग दार्जिलिंग जाते हैं। हर बारह सालों में उनका कलेवर बदलता है। प्रतिदिन उन्हें भोग चढ़ाया जाता है। मंदिर के वैद्य उनके स्वास्थ्य की देखभाल करते हैं, भगवान जगन्नाथ जी को कहीं छींक आ जाये तो! जैसे तुम्हें अपने बच्चे के प्रति अनुराग होता है, जैसे अपने माँ-बाप या पति-पत्नी की चिन्ता होती है वैसी भावना उनकी थी। बिल्कुल यथार्थ भावना, अमूर्त या निराकार नहीं।

वल्लभाचार्य उस सन्त के जीवन में आए और महान् परिवर्तन घटित हो गया। सन्त के कर्म बदल गये। उस दिन से उन्हें अनुभव होने लगे। उनकी अन्दर की आँखें खुल गयीं। जीवनभर वे अन्धे रहे, लेकिन भीतर की आँखों से वे टी.वी. देखने लगे जहाँ उन्हें भगवान कृष्ण कभी शिशु रूप में, कभी माखन-चोर के रूप में तो कभी गोपियों के साथ छेड़खानी करने वाले रूप में दिखते थे। उनकी लीलाओं को देखकर वे भाव-विह्वल होकर गाने लगते थे। भारत में हर कोई उस महान् सन्त को जानता है। उनका नाम था सूरदास। आज भी घर-घर में सूरदास के पद और भजन गाये जाते हैं। वे वल्लभाचार्य के शिष्य हो गये और उसके बाद वे भगवान कृष्ण की सारी नटखट लीला को स्पष्ट देखा करते थे जैसे कोई भौतिक नेत्रों से देख सकता है।

एक दिन यशोदा मैया कृष्ण पर बहुत नाराज हो गईं क्योंकि गाँव की सभी ग्वालिनों ने आकर शिकायत कर दी। कहा, 'तुम्हारा छोरा कृष्ण इतना शरारती है कि अपने सभी ग्वाल-सखाओं के साथ हमारे घरों में घुसकर सारा माखन खा जाता है।' तब यशोदा ने उन्हें बुलाकर ताड़ना शुरू किया और वे जान बचाने के लिये इधर-उधर भागने लगे। अंत में कहने लगे, 'माँ, मैंने माखन नहीं खाया, ये गोपियाँ झूठ बोल रही हैं। मैं तो सबेरे बिस्तर से उठते ही अपने कन्धे पर कम्बल डालकर और हाथ में डण्डा लेकर अपनी गायों को चराने निकल जाता हूँ। मेरे साथ के ग्वाल-बाल मुझे पकड़कर जबरन मेरे मुँह में मक्खन ठूँसकर खिला देते हैं तो मैं क्या करूँ। मैं तुम्हारा अपना बेटा नहीं हूँ न, इसलिये तुम मुझसे प्रेम नहीं करती और सभी झूठी शिकायतें सुन लेती हो।' इस प्रसंग को सूरदास ने अपने एक पद में चित्रवत् प्रस्तुत किया है—

मैया मोरी मैं नहीं माखन खायो।
भोर भई गईयन के पीछे, मधुबन मोहि पठायो।
ग्वाल-बाल सब बैर पड़े हैं, बरबस मुख लपटायो।

हिन्दुस्तान में हर कोई इस पद को जानता है। केवल यह एक प्रसंग ही नहीं, कृष्ण की सम्पूर्ण बाल-लीला, सम्पूर्ण जीवन सूरदास की चेतना में बिल्कुल स्पष्ट दिखने लगा। उनके कर्मों का परिष्कार हो गया। उनके कर्म मिट गये। जब कर्म मिट जाते हैं तो अन्धेरा भी मिट जाता है। कर्म चेतना पर उसी तरह छाये रहते हैं जैसे दर्पण पर धूल या लालटेन के काँच पर कालिख। ज्योति लालटेन के अन्दर है, पर बाहर नहीं दिखती। जब कालिख मिट जाती है तो प्रकाश साफ दिखलाई देता है।

सूरदास के कर्म का क्या हुआ? किसी सुन्दर स्त्री के पीछे भागने के बजाय सूरदास का मन कृष्ण-लीला से जुड़ गया। वे सब कुछ देखने लगे, गाने लगे। उन्होंने अपने मन को नष्ट नहीं किया, वह तो हमेशा वासनायुक्त ही रहा। पर पहले वासना स्त्रियों के लिए थी, अब देवता के लिए हो गई। उन्होंने कृष्ण और गोपियों के दिव्य प्रेम का कितना सुंदर वर्णन किया है!

वृन्दावन छोड़ने के बाद श्रीकृष्ण ने एक बार उद्धव को वहाँ भेजा, राधा और अन्य गोपियों को सान्त्वना देने के लिए। वहाँ जाकर उद्धव ने उन्हें योग, ध्यान और समाधि के बारे में समझाया। गोपियों ने उद्धव से कहा, तुम यह सब क्या कह रहे हो? हमारा एक ही मन, एक ही दिल है और वह हमने श्रीकृष्ण को दे दिया है। दो होते तब न एक योग को दे देते।

उधो मन नाहीं दस-बीस,
एक हूँ तो गयो श्याम संग, कौन अराधे ईस ।

इस तरह के मर्मस्पर्शी गीत लिखे हैं सूरदास ने। सूरदास ने अपने कर्म को खत्म नहीं किया, बल्कि उसका दिशान्तरण कर दिया। इसलिए मैं कहता हूँ कि न कोई कर्म भारी होता है, न कोई हल्का। यही मेरे जीवन का अनुभव रहा है। मुझे अपने जीवन में कभी कोई कर्म भारी नहीं लगा। हमेशा यही लगा कि ये कर्म सीढ़ी के सोपान हैं। मुझे अपनी जीवनशैली के बारे में भी कभी कोई कुण्ठा नहीं रही। मैंने पाँच-सितारा जीवन बिताया है। कभी सेकण्ड क्लास में सफर नहीं किया। जब मैं स्विट्ज़रलैण्ड के ज़िनाल नगर में योग सम्मेलन में भाग ले रहा था

तो मेरा भोजन स्पेन से हवाई जहाज से आता था, क्योंकि मुझे वहाँ का भोजन पसंद नहीं था। मैंने हमेशा यही सोचा कि जब भगवान ने मुझे इस तरह के पाँच-सितारे जीवन का अवसर दिया है तो मैं उससे घृणा क्यों करूँ, उसे पसंद क्यों न करूँ? आखिर उसी ने मुझे यह सब दिया है, मैंने तो यह सब नहीं चाहा था।

कठिनाइयाँ तो हर जगह आती हैं, आध्यात्मिक जीवन में भी और भौतिक जीवन में भी। तुम यह अपेक्षा नहीं रख सकते कि हर चीज सरल और आसान होगी। जिन्दगी संघर्षों की कड़ी है, यह कभी समतल नहीं होती। अगर तुम सोचो कि तुम्हारे परिवार में किसी की मृत्यु न हो तो यह तुम्हारी मूर्खता है। अगर मैं सोचूँ कि कोई मुझे धोखा न दे, सभी मेरे साथ ईमानदारी से पेश आएँ, सभी मेरी तारीफ करें, सब गलत है, बकवास है। लोग मुझे धोखा देंगे, मेरी आलोचना करेंगे, मेरी सेवा करेंगे, मुझसे प्रेम करेंगे, मेरे प्रियजन मर जाएँगे, मैं भी बूढ़ा होकर एक दिन मर जाऊँगा, जो कुछ मैंने कमाया और बनाया है सब धरा-का-धरा रह जाएगा। यह सब तो एकदम स्वाभाविक है, सबके साथ यही होना है। अगर मैं चाहूँ कि सब कुछ साफ-सुथरा रहे तो सम्भव नहीं। यही जीवन का रहस्य है जिसके साथ हर एक को समझौता करना पड़ता है।

जीवन में सबसे बड़ी चीज है कि मनुष्य को अपनी ही इच्छा मुताबिक जीवन को देखने की तमन्ना नहीं होनी चाहिए। कर्म के मुताबिक तुम्हें जो भी जिन्दगी मिली है, उसी का मजा लो। नहीं तो जीवन बहुत कठिन हो जाता है। तुम नहीं चाहते फिर भी वह हो जाता है। पारिवारिक समस्या, आर्थिक समस्या, मानसिक समस्या, सब होने लगती है। इसलिए सबसे अच्छा यही है कि भगवान से कुछ मत माँगो। वे सब जानते हैं, या यूँ कहें कि उन्होंने ही पूरी स्क्रिप्ट पहले से लिख दी है, अब तुम्हें केवल अभिनय करना है। हम सब फिल्मी अभिनेताओं की तरह हैं। सब कुछ तैयार है, केवल अभिनय करना है।

अब बताइये राम जी ने क्या अपराध किया। सात साल की उम्र में गुरुकुल चले गए, वहाँ जमीन पर सोए। राजधानी लौटे, शादी की, फिर जंगल चले गए और जंगल में कोई पत्नी का अपहरण करके ले गया। उसे छुड़ाकर लाए तो उसमें भी बदनामी हुई। उसके बाद तो जानते ही हैं, पूरा जीवन सीता के वियोग में रहा।

श्री कृष्ण तो जन्म से पहले ही कंस की हिट लिस्ट में आ गए थे। कैसे जेल में उनका जन्म हुआ, कैसे उन्हें गोकुल पहुँचाया गया, कैसे उन्हें मथुरा छोड़कर द्वारका जाना पड़ा, एक राज्य छोड़कर दूसरा बसाना पड़ा और मरने के पहले क्या हुआ, सारा यादव खानदान खत्म हो गया। अपने सामने अपने वंश को नष्ट होते देखा। इसे त्रासदी कहोगे या कॉमेडी? जीवन अगर त्रासदी भी हो तो उसे कॉमेडी क्यों न बनाया जाए? जितने दिन जीयो, मजे से जीयो।

–18 मार्च 1998, रिखियापीठ

चतुर्थ अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस 2018

बिहार योग विद्यालय, मुंगेर द्वारा प्रस्तुत

योग से सूक्ष्म चेतना एवं प्रतिभा का विकास

चतुर्थ अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस के अवसर पर हम सभी योग प्रेमियों और साधकों को अपनी हार्दिक शुभकामनाएँ प्रेषित करते हैं। इस दिन हम योग की प्राचीन विद्या के प्रति अपना सम्मान निवेदित करते हैं, जो मानवता के आध्यात्मिक विकास हेतु ऋषि-मनीषियों द्वारा अनादिकाल से परिष्कृत और हस्तान्तरित होती आई है।

मंत्र-शास्त्र योग विद्या का एक महत्त्वपूर्ण अंग है, जो स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती के अनुसार, 'भारतीय ऋषि-मुनियों की दुनिया के लिए एक अनुपम देन है, क्योंकि किसी भी अन्य सभ्यता या संस्कृति में आपको मंत्रों का ऐसा विकसित, व्यवस्थित विज्ञान नहीं मिलेगा। मंत्र परमसत्ता के साथ अपने जीवन के सम्बन्ध को जानने और समझने के माध्यम बनते हैं। इस समझ और ज्ञान के साथ हमारे विचार और कर्म प्राकृतिक नियमों के अनुसार होने लगते हैं और हम आत्म-विकास एवं आत्म-साक्षात्कार के मार्ग पर अग्रसर होते हैं।'

'योग शास्त्र में मंत्र की परिभाषा *मननात् त्रायते इति मंत्रः* है, अर्थात् मंत्र वह शक्ति है जिसके द्वारा हम अपने मन के निरर्थक चिंतन-मनन से मुक्त हो सकते हैं। कई लोग मंत्रों को धार्मिक दृष्टि से देखते हैं या उनके शाब्दिक अर्थ को समझने की कोशिश करते हैं, लेकिन वास्तव में मंत्र एक ध्वनि है, एक स्पन्दन है और मंत्र योग में यथासम्भव इस स्पन्दन से जुड़ने का प्रयास किया जाता है। यही कारण है कि मंत्रों का केवल एक बार उच्चारण नहीं, बल्कि बार-बार जप किया जाता है। जब मंत्र का अभ्यास लम्बे समय तक किया जाता है और आप अपनी सजगता को मंत्र के स्पन्दन में विलीन कर देते हैं तब चेतना की एक विशेष अवस्था का उदय होता है और इसी ध्यानात्मक अवस्था को प्राप्त करना सच्चे योग साधकों का लक्ष्य होना चाहिए।'

इस वर्ष का कार्यक्रम इसी लक्ष्य हेतु तैयार किया गया है। अपनी योग साधना तथा जीवनशैली में मंत्रों को समाविष्ट करने का निष्ठावान् प्रयास अवश्य ही हमारी मनोवस्था में सकारात्मक परिवर्तन लाएगा और प्रसुप्त प्रतिभाओं को जागृत करेगा।

अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस 2018 के लिए आपका योग कार्यक्रम

प्रात: 6 से 7.30 बजे लोग अपने घर अथवा सामुदायिक केन्द्र की छत, बरामदे, आँगन या अन्य खुली जगह में एकत्र होकर निम्नांकित अभ्यास करेंगे–

1. काया स्थैर्यम्, शरीर और मन में संतुलन व सामंजस्य के अनुभव के साथ

मंत्र

2. शांति मंत्र

   ॐ सह नाववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै।
   तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहै। ॐ शान्ति: शान्ति: शान्ति:॥

3. महामृत्युंजय मंत्र – *आरोग्य, ऊर्जा एवं प्रतिरोधक क्षमता की वृद्धि के संकल्प के साथ (11 बार)*

   ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् ।
   उर्वारुकमिव बन्धनात् मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥

4. गायत्री मंत्र – *विवेक, आन्तरिक स्पष्टता, अन्तर्प्रज्ञा, विद्या और बुद्धि के सुषुप्त क्षेत्रों को जाग्रत करने के संकल्प के साथ* (11 बार)

   ॐ भूर्भुव: स्व: तत्सवितुर्वरेण्यं ।
   भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो न: प्रचोदयात् ॥

5. दुर्गा जी के बत्तीस नाम – *जीवन से दुर्गति को दूर कर, शान्ति और सामंजस्य का अनुभव करने के संकल्प के साथ (3 बार)*

   ॐ दुर्गा दुर्गार्तिशमनी दुर्गापद्विनिवारिणी । दुर्गमच्छेदिनी दुर्गसाधिनी दुर्गनाशिनी ॥
   दुर्गतोद्धारिणी दुर्गनिहन्त्री दुर्गमापहा । दुर्गमज्ञानदा दुर्ग दैत्यलोकदवानला ॥
   दुर्गमा दुर्गमालोका दुर्गमात्मस्वरूपिणी । दुर्गमार्गप्रदा दुर्गमविद्या दुर्गमाश्रिता ॥
   दुर्गमज्ञानसंस्थाना दुर्गमध्यानभासिनी । दुर्गमोहा दुर्गमगा दुर्गमार्थस्वरूपिणी ॥
   दुर्गमासुरसंहन्त्री दुर्गमायुधधारिणी । दुर्गमांगी दुर्गमता दुर्गम्या दुर्गमेश्वरी ॥
   दुर्गभीमा दुर्गभामा दुर्गभा दुर्गदारिणी ।

आसन

6. ताड़ासन* (9 बार)
7. तिर्यक् ताड़ासन (9 बार)

8. कटि चक्रासन (9 बार)
9. शवासन**
10. पाद संचालनासन, चरण 2 (9 बार)
11. नौकासन (9 बार)
12. चक्की चालनासन (9 बार)
13. वायु निष्कासनासन (9 बार)
14. वज्रासन (एक-दो मिनट के लिए, उदर श्वसन के साथ)
15. मार्जारि आसन (9 बार)

आसनों का यह सरल, संक्षिप्त कैप्सूल अनेक पाचन सम्बन्धी समस्याओं का निदान करता है और सम्पूर्ण पाचन तंत्र के लिए लाभदायक है।

प्राणायाम

16. शीतली/शीतकारी प्राणायाम (10 बार)
17. नाड़ी शोधन प्राणायाम 1:1 (10 बार)
18. भ्रामरी प्राणायाम (10 बार)

यम-नियम

कुछ मिनटों के लिए मन:प्रसाद अर्थात् प्रसन्नता के यम और जप के नियम पर मनन करें और इन गुणों को अपने भीतर विकसित करने का प्रयास करें।

19. *मन:प्रसाद*– सन् 2016 के योग दिवस पर प्रस्तुत इस यम का आप किस हद तक अभ्यास कर पाए हैं और इसका आपके जीवन पर क्या प्रभाव पड़ा है? विगत दिवसों का अवलोकन करके उन क्षणों को पहचानिये जब आप वास्तव में प्रसन्न थे। उन क्षणों की ऊर्जा और सकारात्मकता से जुड़कर स्वयं को वैसी मनोवस्था में लाइये। हर दिन इस अवस्था की अवधि को बढ़ाने का प्रयास कीजिये। अगर आप अभी भी अप्रसन्न हैं तो उसका मूल कारण खोजिये, अपनी कमजोरी या दुर्गुण को पहचानिये। फिर उसके विपरीत के सद्गुण पर चिंतन करके उसे सुदृढ़ कीजिये और स्वयं को प्रसन्नता की अवस्था में लाइये।
20. *जप*– हम हमेशा इन्द्रियों और इन्द्रिय विषयों से जुड़े रहते हैं। अपने मन को इनसे थोड़ी देर हटाकर किसी अन्य चीज से जोड़ने का साधन है जप। जप द्वारा मन और विषयों के बीच संबंध-विच्छेद हो जाता है, और तब हम अपना ध्यान अपनी आंतरिक प्रकृति की खोज में लगा पाते हैं, जहाँ हमें

सच्ची शांति की अनुभूति होती है। इस लक्ष्य के साथ पाँच मिनट तक ॐ मंत्र का उच्चारण कीजिये और अपनी सजगता को मंत्र की ध्वनि पर पूरी तरह केन्द्रित रखिये। साथ ही प्रतिदिन जब भी अवसर मिले ॐ अथवा अपने गुरु मंत्र का मानसिक जप करने का प्रयास कीजिये।

प्रत्याहार

21. अजपाजप (नाभि से कण्ठ के प्राणिक पथ में सोऽहं मंत्र की सजगता, 5 मिनट)
22. संक्षिप्त योग निद्रा (चरण 3 एवं 4, 10 मिनट)
23. यौगिक प्रार्थना का पाठ

असतो मा सद्गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय। मृत्योर्माऽमृतं गमय।
सर्वेषां स्वस्तिर्भवतु। सर्वेषां शान्तिर्भवतु। सर्वेषां पूर्णं भवतु।
सर्वेषां मंगलं भवतु। लोका: समस्ता: सुखिनो भवन्तु।
ॐ शान्ति: शान्ति: शान्ति:॥

इस संकल्पयुक्त प्रार्थना में यौगिक शिक्षाओं का सार निहित है। हर साधक के लिये यह योग के व्यक्तिगत और सामाजिक लक्ष्यों का प्रतीक है। असत्य से सत्य, अंधकार से प्रकाश तथा मृत्यु से अमरता तक पहुँचना ही वह व्यक्तिगत लक्ष्य है जिसे योग ने हमें खोजने के लिये दिया है। योग का सामाजिक लक्ष्य यही है कि सब जगह अच्छाई, शांति, पूर्णता और मांगल्य व्याप्त हो तथा सभी सुखी हों।

---

* *गत्यात्मक अभ्यासों में सजगता पहली तीन आवृत्तियों में शारीरिक गतिविधि और संवेदनाओं पर, अगली तीन आवृत्तियों में श्वास व प्राणों पर और अंतिम तीन आवृत्तियों में अभ्यास के मानस दर्शन पर रहे।*

** *शवासन का अभ्यास समूह की आवश्यकतानुसार किया जा सकता है।*

सभी योग साधकों को एक वर्ष तक इन अभ्यासों का अनुसरण करने और फिर उनके परिणामों पर चिंतन करने का सुझाव दिया जाता है। हम आशा करते हैं कि योग की प्रेरणा आपके जीवन में बनी रहेगी और आप दूसरों को भी यौगिक जीवन जीने के लिए प्रेरित कर सकेंगे।

हरि: ॐ तत्सत्
स्वामी शिवध्यानम्
संयोजक

अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस 2018 की झाँकियाँ

21 जून को बिहार योग विद्यालय ने पादुका दर्शन में चतुर्थ अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस के अवसर पर प्रात: 6 से 7.30 बजे तक योग कार्यक्रम संचालित किया। कार्यक्रम में शामिल हुए 500 से अधिक प्रतिभागियों को आसन, प्राणायाम, शिथिलीकरण, धारणा और यम-नियम ध्यान के सरल एवं उपयोगी अभ्यास कराए गए।

'योग नगरी' मुंगेर के 100 से अधिक स्थानों पर बाल योग मित्र मण्डल के बच्चों, युवा योग मित्र मण्डल के युवा सदस्यों एवं रामायण मण्डली की महिलाओं द्वारा इसी तरह के योग कार्यक्रम संचालित किए गए जिनमें हजारों लोग शामिल हुए। साथ ही 2000 से अधिक घरों में 10,000 से अधिक योगप्रेमियों ने निर्देशित कार्यक्रम अनुसार स्वयं योगाभ्यास किया।

अभयपुर, बरियारपुर, भागलपुर, दरभंगा, बोधगया, हवेली-खड़गपुर, लक्खीसराय, मरांची, पटना, संग्रामपुर, शेखपुरा एवं सूर्यगढ़ा जैसे बिहार राज्य के अनेक स्थानों तथा बेंगलुरु, भिलाई, भुज, बिलासपुर, चेन्नई, दिल्ली, धनबाद, जमशेदपुर, मुम्बई, सतना एवं विजयवाड़ा जैसे भारत के विभिन्न नगरों में भी सम्बद्ध केन्द्रों एवं शिक्षकों द्वारा इसी तरह के योग कार्यक्रम संचालित किए गए।

साथ ही बल्गोरिया, हंगरी, ईरान, आयरलैण्ड, इटली, नेपाल, सर्बिया, स्वीडन, स्विट्ज़रलैण्ड, थायलैण्ड और संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे विभिन्न देशों में भी इसी प्रकार के कार्यक्रम संचालित किए गए।

संस्कार और जीवनशैली

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

21 जून को अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस के कार्यक्रम के संचालन में हमारे बाल योग मित्र मंडल के सदस्यों, युवा योग मित्र मंडल के सदस्यों, रामायण मंडली की माताओं और मुंगेर योग परिवार के सदस्यों ने जो सहयोग दिया उसके लिए आप सभी लोगों को साधुवाद। देखा जाए तो यह कार्यक्रम इस नगर की शान रहा है। पिछले चार वर्षों से अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस भारतवर्ष में तथा पाश्चात्य देशों में भी मनाया जा रहा है। योग के जो कार्यक्रम वहाँ होते हैं और जो यहाँ पर होते हैं, अगर उन्हें एक तुलनात्मक दृष्टिकोण से देखा जाए तो बहुत बड़ा अन्तर दिखलाई देता है। पूरे विश्व में और भारत के अन्य स्थानों में योग की जो शिक्षा होती है वह आसन आधारित शिक्षा है। कुछ लोग तो कहते हैं कि आसन ही योग है, और आसन आधारित शारीरिक शिक्षा को ही वे लोग योग मानते हैं। हम तो कहेंगे कि पूरी दुनिया में करीब नब्बे प्रतिशत लोग योग को शरीर आधारित प्रक्रिया मानते हैं, आसन तक ही सीमित रखते हैं। कहीं पर आसन के साथ प्राणायाम जोड़ देते हैं, और कहीं पर कोई वेदान्तिक ध्यान जोड़ देते हैं और वही उनके लिए योग हो जाता है।

योग का दूसरा अध्याय

मुंगेर की जो योग परम्परा है, जिसे हमलोग बिहार योग पद्धति कहते हैं और जिसके प्रचार में आप सब लोगों का सहयोग निरंतर मिला और मिल रहा है, इसमें

केवल आसन आधारित योग की शिक्षा नहीं है, बल्कि जीवन को सुसंस्कृत बनाने और जीवन को व्यवस्थित करने की शिक्षा भी शामिल है। यही योग के द्वितीय सोपान का उद्देश्य भी है—संस्कार और जीवनशैली। वास्तव में अभी तक योग का जो प्रचार-प्रसार विश्व में हुआ है उससे मनुष्य या समाज को क्या प्राप्ति हुई है? शारीरिक और मानसिक स्तर पर तो अवश्य प्राप्ति हुई है—लोग रोगमुक्त हुए हैं, तनावमुक्त हुए हैं। शारीरिक स्वास्थ्य और मानसिक शान्ति की अनुभूति तो निश्चित रूप से हुई है। लेकिन इसके आगे क्या?

अब योग की यात्रा में दूसरा कदम लेना है। पहला कदम था योग प्रचार का और दूसरा कदम है जीवन को संस्कारों से युक्त करना और अपनी जीवनशैली को व्यवस्थित करना। संस्कार और जीवनशैली—ये योग के अगले सोपान हैं, जिस पर पिछले चार वर्षों से गंगा दर्शन में हमलोग काम कर रहे हैं। सन् 2018 योग के लिये बहुत महत्त्वपूर्ण वर्ष है। इस वर्ष से योग के इस द्वितीय सोपान का व्यावहारिक प्रचार और प्रशिक्षण, दोनों सम्पन्न हो रहे हैं। हमलोगों ने भारत के विभिन्न राज्यों में शिविरों के माध्यम से प्रशिक्षण देना आरम्भ किया है। इच्छा थी कि जनवरी से जून तक करीब चार सौ शिविर हों, क्योंकि यह अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस का चौथा वर्ष है। सच कहूँ तो हमारे लिये योग दिवस तो प्रतिदिन है। अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस तो अपने समाज और देश के लिये केवल एक अवसर है जब हम योग के बारे में सोच सकते हैं, चिंतन कर सकते हैं, एक दिन समय दे सकते हैं और अपने को योगाभिमुख कर सकते हैं। अगर हम इस प्रेरणा को सालभर तक कायम रखें तो निश्चित रूप से उपलब्धि हमारी है, फायदा हमें है।

इस वर्ष हमलोगों ने निर्णय लिया कि पूरे भारत में चार सौ योग शिविर करेंगे। अपने जितने भी योग शिक्षक थे सबको प्रेरित करके उनके माध्यम से विभिन्न राज्यों, नगरों, कस्बों और गाँवों में योग शिविरों का संचालन हुआ है। इस क्रम में बिहार में भी करीब पैंतालीस जगहों पर योग कार्यक्रम संचालित किये गये। इन शिविरों के अतिरिक्त दिल्ली, मुम्बई, कोलकाता जैसे देश के बड़े शहरों में योग सम्मेलनों का संचालन भी हुआ है। पिछले छः महीनों में करीब हर महीने एक योग सम्मेलन का संचालन तो निश्चित रूप से हुआ है। फिर अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस के दिन इस वर्ष भी हमारे शिक्षकों की बहुत माँग रही। पर्यटन विभाग के अनुरोध पर गया के बोधि मंदिर में अनेक देशों से आये प्रतिभागियों के लिये योग प्रशिक्षण और योग परिचर्चा आयोजित की गई। इस प्रकार अन्य शहरों और देशों में भी संन्यासियों तथा योग शिक्षकों ने जाकर अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस के दिन बिहार योग पद्धति की शिक्षा दी है। यह अन्तिम कार्यक्रम है इस प्रचार का, इसके बाद जो कार्यक्रम होगा वह मुंगेर के लिये, योग के लिये, हम सबके लिये बहुत महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम है।

योग संगोष्ठी

इस साल हमें भी जनवरी से जून तक आश्रम में ही एकान्तिक समय व्यतीत करके योग के कार्यक्रमों, विधियों और शिक्षाओं को आगे बढ़ाने का एक अवसर मिला। इसी कारण आज योग को हम दूसरे अध्याय की ओर ले जा पा रहे हैं। इस साल भी बहुत-से साहित्यों का लेखन हुआ है। हमने स्वयं बहुत-से सत्रों का आश्रम में संचालन किया है और इसके माध्यम से जो शिक्षण आया है वह भी साहित्यों का आधार बना है। जून तक इस प्रकार की तैयारी बहुत हुई है। तैयारी किसलिये? इस साल अक्टूबर महीने में मुंगेर में एक योग संगोष्ठी आयोजित कर रहे हैं। बृहत् रूप में नहीं जैसे पूर्व में हुआ है, इस बार केवल अपने योग शिक्षकों को बुलाया है। हमारे जो योग शिक्षक दुनिया के विभिन्न राष्ट्रों में, भारत के विभिन्न राज्यों में योग प्रशिक्षण का काम कर रहे हैं, वे लोग बड़ी संख्या में आयेंगे। यह योग प्रशिक्षकों के लिये गोष्ठी है जिससे हम उनको नवीन शिक्षा दे सकें और फिर उनको इस नयी शिक्षा को समाज में लाने के लिये प्रेरित कर सकें। आखिर जब तक हम शिक्षक तैयार नहीं करेंगे तो जनता को क्या देंगे? अगर हम बड़ा योग सम्मेलन करते हैं और तीस-चालीस हजार की भीड़ आती है जैसे पिछले सम्मेलनों में आई है, तो हमने उन्हें बुला तो लिया लेकिन देंगे क्या? हमारे शिक्षक ही तैयार नहीं हैं। इसलिये हमने निर्णय लिया कि पहले शिक्षकों को इस द्वितीय सोपान के लिये तैयार करो और फिर अगले वर्ष से हमलोग इसको व्यापक रूप से फैलायेंगे। शिक्षक तैयार तो समाज तैयार, और जब दोनों तैयार तब फिर प्रगति संभव है।

अक्टूबर की योग संगोष्ठी पूरे विश्व में और अपने देश में संस्कार और जीवनशैली को आधार बनाकर एक नये योग आन्दोलन को लाने में बहुत महत्त्वपूर्ण सिद्ध होगी। अगले वर्ष से फिर योग की इतनी सारी विधियों और शिक्षाओं को सामने लाया जायेगा कि मुझे स्वयं आश्चर्य होता है कि हमलोग कितना कम जानते हैं इस विद्या के बारे में जो हमारे पूर्वजों ने हमें अपने जीवन को उन्नत करने के लिये एक धरोहर के रूप में प्रदान की है। निश्चित रूप से अगले साल से योग के क्षेत्र में एक परिवर्तन और एक नवीन क्रांति का उद्भव होने वाला है, इस योग नगरी मुंगेर से।

मुंगेर की महिमा

पूरे देश में और विश्व में मुंगेर ही एक ऐसा स्थान है जहाँ पर हर व्यक्ति योग को एक साधना, एक जीवनशैली के रूप में देखता है। कोई दूसरा शहर नहीं है जहाँ पर कोई कह सके कि 'योगाश्रम के प्रांगण से घर के छत-आँगन तक' योग का कार्यक्रम होता है। यह मुंगेर का ही नारा है। जब यहाँ योग दिवस पर कार्यक्रम होता है तो हमलोग देखते ही हैं कि किस प्रकार हजारों घरों की छतों पर या मैदानों में या यहाँ-वहाँ कहीं पर भी दस-पन्द्रह-बीस-पचास लोग मिलकर योगाभ्यास करते हैं। यह कोई मामूली बात तो है नहीं, यह एक उत्साह, एक लगाव, एक संबंध को दर्शाती है।

मुंगेर की भूमि शुरू से आध्यात्मिक रही है। इसका प्राचीन नाम है मुद्गलपुर जो मुद्गल ऋषि के कारण पड़ा। यह शृंगी ऋषि का क्षेत्र रहा है जो महान् तपस्वी थे। और भी अनेक मनीषियों का यहाँ आगमन हुआ है। महात्मा बुद्ध ने अपने बौद्ध भिक्षुओं को पहला अनुशासन मुंगेर में दिया था। हमारे दादा गुरु, स्वामी शिवानन्द जी भी सन् 1936 के भूकम्प के बाद मुंगेर आये थे और नगर संकीर्तन किया था। उनकी वाणी का स्पन्दन आज भी है यहाँ पर। रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने गीतांजलि की रचना यहीं पीर पहाड़ी पर की थी। स्वामी विवेकानन्द जी ने भी यहाँ आकर स्वास्थ्य लाभ उठाया था।

इसलिए मुंगेर की धरती तो निश्चित रूप से पवित्र आध्यात्मिक ऊर्जा से युक्त सांस्कृतिक भूमि रही है। दूसरी बात, यहाँ पर एक परम्परा की शुरुआत हुई है जो व्यक्ति-मूलक नहीं बल्कि संस्कृति-मूलक है। स्वामी सत्यानन्द जी आये, योग विद्यालय की स्थापना

की और आगे बढ़ गये। हम आये, योग से जुड़े, कुछ दिन काम किया, सेवानिवृत्त हो गये। अगली पीढ़ी आयी, सेवा कर रही है और योग के इस कार्यक्रम को और आगे बढ़ा रही है। इस साल तो मैंने कहीं यात्रा भी नहीं की। हमारे आश्रम के संन्यासियों ने ही जैसे-तैसे प्रवचन दिये हैं, कक्षाएँ कराई हैं, सब कुछ किया है। किसी ने डर-डर करके कागज से पढ़कर क्लास लिया, प्रवचन दिया तो किसी ने सीना तानकर, दहाड़ करके। लेकिन सब संन्यासी लोगों ने ही किया, हम कहीं नहीं गये। यह तो एक उपलब्धि है कि लोग एक व्यक्ति से नहीं, बल्कि एक संस्कृति से अपने आपको जोड़ रहे हैं ताकि स्वयं को, अपने परिवार को, अपने समाज को, अपने राज्य को, अपने राष्ट्र को उत्तम और उन्नत बना सकें। आप सब जिन्होंने इस कार्यक्रम में सहयोग दिया है, साथ दिया है और भविष्य में भी जो देते रहेंगे, यह आपका सौभाग्य है कि अपने घर-परिवार के अतिरिक्त समाज के सांस्कृतिक उत्थान के लिये योगदान देने का अवसर मिला है।

हमलोग उसी प्रकार का काम कर रहे हैं जैसे गिलहरी अपने शरीर को भिगोकर रेत से लपेटकर रामसेतु के चट्टानों के बीच जाकर झाड़ती थी ताकि सेतु मजबूत रहे। जितना हमलोग अपनी संस्कृति को आत्मसात् करेंगे, हमारी संस्कृति के चट्टान उतने ही मजबूत होते जायेंगे, और एक दिन अटूट भी हो जायेंगे। जिस दिन हमारी संस्कृति हमलोगों के कारण अटूट हो जायेगी उस दिन भारत फिर से अपने आपको जगद्गुरु कहलाने योग्य होगा। अभी भारत जगद्गुरु नहीं है, राजनीति में जो भी कहा जाए। अभी अपने जीवन में संस्कारों का अभाव है, शील का अभाव है, जीवन में तमस् अधिक है और उस तमस् में नकारात्मकता ज्यादा है। उस तमस् में अगर थोड़ी सकारात्मकता बढ़ जाए तो और आनन्द आयेगा, लेकिन अगर तमस् में नकारात्मकता बढ़ जाए तो पतन के गर्त में ही जायेंगे।

हमलोग यहाँ पर संस्कारों की जो शिक्षा देते हैं, वह केवल एक दर्शन नहीं है, बल्कि एक व्यावहारिक शिक्षा है और मुझे इस बात का गर्व है कि मुंगेर इस क्षेत्र में आगे है। जो बच्चे दस-पन्द्रह साल पहले बाल योग मित्र मंडल में थे वे अच्छे संस्कारों से युक्त होकर आज देश के कई भागों में फैले हैं। जब कभी उनका मुंगेर लौटना होता है, वे आते हैं यहाँ पर और उन्हें देखकर बहुत प्रसन्नता होती है कि वे अपने घर में, अपने परिवार में, अपने शहर में, अपनी नौकरी में एक अच्छे संस्कार, चिन्तन, आदर्श एवं व्यवहार को लेकर गये हैं और सफलता हासिल कर रहे हैं। भले ही आप इस बात को समझो या न समझो, मुंगेर अपने में एक अद्वितीय स्थान है। आनेवाले दशकों में लोगों को मालूम पड़ेगा कि यहाँ की मिट्‌टी में कितने सुन्दर, कितने जीवन्त संस्कार हैं, जो हमारी संस्कृति को और भी दृढ़ करेंगे, विकसित करेंगे। इसमें आप सबका अतुलनीय सहयोग रहा है, इसलिये आप सबको एक बार फिर बहुत-बहुत साधुवाद!

–23 जून 2018, गंगा दर्शन

योग यात्रा के सहयात्री

जिज्ञासु मौनविलास, काठमाण्डू (संन्यास प्रशिक्षण 2018-2019)

यह बात सन् 2017 की है। मैंने काठमाण्डू, नेपाल में एक महिला को योग सिखाना शुरू किया। वे 45 साल की थीं और उनके गर्भाशय में ट्यूमर हुआ था। उन्होंने ज्यादा परवाह नहीं की और अपना जीवन चलाते गईं। रोग बढ़ जाने पर डॉक्टर ने शल्य-चिकित्सा की सलाह दी, लेकिन उन्होंने पहले योग का अभ्यास किया। मैंने उनको पवनमुक्तासन और कुछ शिथिलीकरण के अभ्यास करवाए जिन्हें वे धीरे-धीरे करने लगीं। उनका मासिक धर्म जो रुका था, वह ठीक होने लगा। उनका शरीर बहुत दर्द करता था, वह कम होता गया। सुबह उनको आसन, प्राणायाम, मुद्रा, बन्ध करवाती, दिन में योगनिद्रा, और रात में जप। भोजन के बाद वज्रासन, और सरदर्द से दूर रहने के लिये शंशाकासन में विश्राम का अभ्यास भी करवाती। शुरू में उन्हें शवासन में लेटने में दिक्कत होती थी, पर धीरे-धीरे करके उनको आदत पड़ गई।

शल्य-चिकित्सा के लिये विविध जाँच के पश्चात् अन्तत: दिल्ली के अस्पताल में भर्ती करवाया गया। शल्य-क्रिया के समय डॉक्टर भी हैरान रह गये। वे पूरी तरह शांत थीं और बिना जेनेरल एनेस्थीसिया के सर्जरी हो गई। उनके गर्भाशय से 42 सेन्टीमीटर आकार का और लगभग दो किलो वजन का ट्यूमर निकाला गया। शल्य-क्रिया पूर्णत: सफल रही। वे जल्द ही घर लौट आयीं और दो महीने के आराम पश्चात् उन्होंने फिर से योगाभ्यास शुरू किया। दिन-प्रतिदिन शरीर हल्का होता गया और घाव भी जल्दी ही भर गया। छ: महीने के बाद वे पूर्ण स्वस्थ हो गयीं।

योग से शरीर, मन और आत्मा स्वस्थ हो जाते हैं, इसे वास्तव में अपने जीवन में घटित होते देखकर उन्होंने फिर दसवीं कक्षा में पढ़ रही अपनी बेटी को भी मेरे साथ योग करवाया। उसका मासिक स्राव का दर्द कम हो गया, दिनचर्या ठीक होने लगी। समय पर सोना-उठना, पढ़ना-लिखना सब अच्छा होता गया और अन्तत: अन्तिम परीक्षा में उसका A+ ग्रेड आया। अभी उसके अभिभावकों ने उसे आगे पढ़ने के लिये बहुत अच्छे स्कूल में डाला है।

ऐसे ही अपनी सबसे छोटी बहन को भी योग सिखाया। वह 15 साल की है और वह भी दसवीं कक्षा में पढ़ रही थी। वह पढ़ाई में बहुत व्यस्त थी। उसे मैंने सिरदर्द कम करने, पेट और कमर दर्द करने, मासिक धर्म ठीक रखने के आसन-प्राणायाम सिखाये। धीरे-धीरे छ: महीने बाद उसका असर दिखना शुरू हुआ। वह स्वस्थ और प्रफुल्लित होती गई। बाद में अन्तिम परीक्षा में उसका A ग्रेड आया और अभी वह इन्जिनियरिंग के लिए अध्ययन पूरा कर रही है।

यह हमारा बड़ा अहोभाग्य कि हम योग योत्रा के सहयात्री हो पाए!

योगा एवं *योगविद्या* प्रसाद

सन् 2013 में बिहार योग विद्यालय ने अपनी स्वर्ण जयन्ती मनाई, जिसका समापन अक्टूबर 2013 में आयोजित विश्व योग सम्मेलन के साथ हुआ। इस ऐतिहासिक सम्मेलन में यह स्पष्ट हो गया कि योग को नगर-नगर डगर-डगर पहुँचाने का संकल्प सफलतापूर्वक सम्पन्न कर लिया गया है। 50 वर्षों की अवधि में दुनियाभर के योग साधकों और योग प्रेमियों की मदद से प्राप्त यह उपलब्धि यौगिक पुनर्जागृति की द्योतक है।

विश्व योग सम्मेलन के पश्चात् बिहार योग विद्यालय के दूसरे अध्याय का श्रीगणेश हो गया है, जिसका लक्ष्य भावी पीढ़ियों के कल्याण के लिए स्वामी शिवानन्द जी और स्वामी सत्यानन्द जी की परम्परा से प्राप्त योग विद्या का संरक्षण और संवर्धन है।

इस दूसरे अध्याय में बिहार योग विद्यालय *योगा* और *योगविद्या* पत्रिकाओं को गुरु परम्परा के आशीर्वाद सहित प्रसाद स्वरूप प्रस्तुत कर रहा है। वर्तमान डिजिटल युग में योग विद्या के प्रभावी प्रचार-प्रसार हेतु *योगा* और *योगविद्या* पत्रिकाएँ अब पी.डी.एफ. फॉरमैट में डाउनलोड हेतु उपलब्ध हैं, तथा साथ ही IOS एवं Android प्लैटफार्मों पर नि:शुल्क एप्प के रूप में उपलब्ध हैं।

***योगा* पत्रिका डाउनलोड करने के लिए–**
http://www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yoga-magazines/

***योगविद्या* पत्रिका डाउनलोड करने के लिए–**
http://www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yogavidya/

IOS प्लैटफार्म पर *योगा* एवं *योगविद्या*, दोनों पत्रिकाओं को पढ़ने के लिए इस एप्प को डाउनलोड करें–https://itunes.apple.com/us/developer/bihar-school-of-yoga/id1134424786

Android प्लैटफार्म पर *योगा* पत्रिका पढ़ने के लिए यह एप्प डाउनलोड करें–https://play.google.com/store/apps/details?id=net.biharyoga.yogapeeth.app.emag.android.yoga

Android प्लैटफार्म पर *योगविद्या* पत्रिका पढ़ने के लिए यह एप्प डाउनलोड करें–https://play.google.com/store/apps/details?id=net.biharyoga.yogapeeth.app.emag.android.yogavidya

***योगा* पत्रिका की पुरानी प्रतियों के संग्रह** को पढ़ने तथा उनमें किसी विषय को खोजने हेतु देखें–http://www.yogamag.net/archives.shtml

- Registered with the Department of Post, India
  Under No. MGR-01/2017
  Office of posting: Ganga Darshan TSO
  Date of posting: 1st-7th of every month
- Registered with the Registrar of Newspapers, India
  Under No. BIHHIN/2002/6306

issn 0972-5725

यौगपीठ कार्यक्रम एवं योग विद्या प्रशिक्षण 2019

फरवरी 4-मई 26	चातुर्मासिक योग अध्ययन (हिन्दी)
फरवरी 6-8	श्री यंत्र आराधना
फरवरी 9	बसंत पंचमी महोत्सव, बिहार योग विद्यालय का स्थापना दिवस
फरवरी 14	बाल योग दिवस
फरवरी 18-24	योग कैप्सूल-श्वास सम्बन्धी (हिन्दी)
फरवरी 18-24	योग कैप्सूल-गठिया सम्बन्धी (हिन्दी)
मार्च 1-30	एकमासिक योग प्रशिक्षण (हिन्दी)
मार्च 9-17	पूर्ण स्वास्थ्य कैप्सूल (हिन्दी)
मार्च 11-17	योग कैप्सूल-पाचन सम्बन्धी (हिन्दी)
अप्रैल 2-6	योग जीवनशैली कैप्सूल (हिन्दी/अंग्रेजी)
अप्रैल 22-28	हठ योग यात्रा 1 एवं 2
मई 13-19	हठ योग यात्रा 3 एवं 4
जून 2-6	योग जीवनशैली कैप्सूल (हिन्दी/अंग्रेजी)
अगस्त 16-22	राज योग यात्रा 1 एवं 2
अगस्त 23-29	राज योग यात्रा 3 एवं 4
अक्टूबर 1-30	बिहार योग शिक्षकों के लिए प्रगतिशील प्रशिक्षण 1, 2 (अंग्रेजी)
अक्टूबर 1-जनवरी 25	चातुर्मासिक योग अध्ययन (अंग्रेजी)
नवम्बर 4-10	क्रिया योग यात्रा 1 एवं 2
नवम्बर 11-17	क्रिया योग यात्रा 3
दिसम्बर 18-22	योग चक्र शृंखला (अंग्रेजी)
दिसम्बर 25	स्वामी सत्यानन्द जन्मदिवस
प्रत्येक शनिवार	महामृत्युंजय हवन
प्रत्येक एकादशी	भगवद् गीता पाठ
प्रत्येक पूर्णिमा	सुन्दरकाण्ड पाठ
प्रत्येक 4, 5 एवं 6 तारीख	गुरु भक्ति योग
प्रत्येक 12 तारीख	अखण्ड रामचरितमानस पाठ

आश्रम में मोबाइल फोन लाना वर्जित है। अपना मोबाइल फोन कदापि अपने साथ न लाएँ।

उपर्युक्त सत्रों/ कार्यक्रमों के सम्बन्ध में विशेष जानकारी के लिए सम्पर्क करें–

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर, बिहार 811201
फोन : 06344-222430, 06344-228603 फैक्स : 06344-220169
वेबसाइट : www.biharyoga.net

✉ अन्य किसी जानकारी हेतु अपना पता लिखा और डाक टिकट लगा हुआ लिफाफा भेजें, जिसके बिना उत्तर नहीं दिया जायेगा।